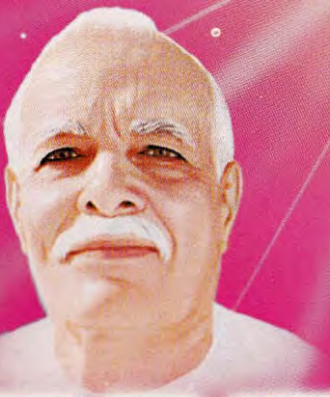

परमात्मा का अवतरण

कब, क्यों और कैसे?

परमात्मा का अवतरण कब और कैसे?

इस
पुस्तक में
परमात्मा के अवतरण
के विषय में बहुत ही नये एवं
महत्त्वपूर्ण रहस्य खोले गये हैं। इन्हें
शान्तिपूर्ण स्थिति में तथा निष्पक्ष
भाव से पढ़ने पर मनुष्य को बहुत ही
रुचिकर, आवश्यक एवं लाभदायक बातों
का पता चलता है और वह परमपिता परमात्मा
के अवतरण के विषय में स्पष्ट रीति से समझ कर
उनसे सम्पूर्ण पवित्रता, सुख एवं शान्ति के
ईश्वरीय जन्म-सिद्ध अधिकार प्राप्त कर
सकता है। इसके साथ-ही-साथ उसे
परमात्मा के स्वरूप का बोध होता है
और वह तीनों कालों एवं
तीनों लोकों का भी
संक्षिप्त परिचय
पा लेता
है।

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय
पाण्डव भवन, आबू पर्वत (राजस्थान)

स्वयं परमपिता परमात्मा शिव ने
प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा जो ज्ञान दिया
और दे रहे हैं, उसी के आधार पर
यह पुस्तक लिखी गई है।

लेखक :
ब्र.कु. जगदीशचन्द्र

प्रकाशक एवं मुद्रक:
साहित्य विभाग,
ओमशान्ति प्रेस, ज्ञानामृत भवन,
शान्तिवन, आबू रोड – ३०७ ५१०
☎ – २८१२४, २८१२५

पुस्तक मिलने का पता:
साहित्य विभाग,
पाण्डव भवन, आबू पर्वत – ३०७ ५०१

कापी राइट:
प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय,
पाण्डव भवन, आबू पर्वत – ३०७ ५०१
राजस्थान, भारत ।

भूमिका

परमात्मा के अवतरण के बारे में घोषणा

यदि आज हम यह घोषणा करें कि परमात्मा अवतरित हो चुके हैं तो सम्भवत: बहुत लोग हमारी इस घोषणा में कोई विशेष रुचि प्रकट नहीं करेंगे क्योंकि भारत में हर आये दिन, कोई-न-कोई साधु, संत या गुरु अपने बारे में ऐसी घोषणा करता ही रहता है। पुनश्च, यहाँ 'अवतार' शब्द का भी कोई निश्चित अर्थ नहीं है और 'परमात्मा' के स्वरूप के बारे में भी कोई एक स्थिर मान्यता नहीं है, अत: लोग इस घोषणा को स्पष्ट रीति से समझ भी नहीं पायेंगे। इसके अतिरिक्त प्रचलित मान्यताओं के अनुसार जिस किसी को भी 'अवतार' माना जाता है उसके जीवन से सम्बद्ध अनेक ऐसे आख्यान लोगों को सुनने को मिलते हैं जिनके परिणामस्वरूप मनुष्य के मन में परमात्मा के अवतरण के विषय में कोई विशेष रुचि नहीं रही।

परन्तु सत्यता का परिचय देना तो मनुष्य का नैतिक कर्त्तव्य है। उसको ध्यान में रखते हुए हमें यह बताने में हर्ष अनुभव होता है कि मानवमात्र के परमप्रिय परमपिता परमात्मा का अवतरण हो चुका है और अब वे स्वयं हरेक मनुष्य को पवित्रता, सुख एवं शान्ति का ईश्वरीय जन्म-सिद्ध अधिकार प्राप्त करने के लिए शुभ निमन्त्रण दे रहे हैं। इस घोषणा को बुद्धिगम्य करने के लिए अवतरण-सम्बन्धी प्रश्नों को यहाँ स्पष्ट किया गया है। यह स्पष्टीकरण स्वयं भगवान द्वारा उद्घाटित रहस्यों पर आधारित है और अवतारवाद को मानने तथा न मानने वाले दोनों प्रकार के लोगों के लिये बहुत ही उपयोगी एवं रुचिकर सिद्ध होगा।

मालूम रहे कि वर्तमान समय एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण समय है जिसके बाद नये युग, सतयुग का प्रारम्भ होने वाला है क्योंकि अब परमपिता परमात्मा अवतरित होकर अपना महान कर्त्तव्य कर रहे हैं। इस पुस्तिका को तथा अन्य सम्बन्धित साहित्य को पढ़ने से एवं सम्मुख पधार कर जानकारी प्राप्त करने से ये महत्त्वपूर्ण रहस्य भली-भाँति स्पष्ट हो सकते हैं।

– सम्पादक

अमृत सूची

क्र०	विवरण	पृष्ठ सं०
१.	क्या परमात्मा का अवतरण होता है?	५
२.	परमात्मा का अवतरण क्यों और किस तन में?	२४
३.	परमपिता परमात्मा के अवतरण के उद्देश्य क्या कच्छ-मच्छ इत्यादि अवतार हैं?	३८
४.	पराये तन में परमात्मा का प्रवेश और उनका साधारण वेश।	६०
५.	परमात्मा का अवतरण होने पर उनकी पहचान	७१
६.	समाचार पत्रों के आधार पर स्पष्टीकरण।	८८
७.	वर्तमान समय परमात्मा का अवतरण हो चुका है	९९
८.	सभी मनुष्यात्माओं को ईश्वरीय निमन्त्रण	११०

क्या परमात्मा का अवतरण होता है? कब और कैसे?

आज संसार में परमात्मा के अस्तित्व में विश्वास रखने वाले लोगों में से कुछ लोग तो ऐसे हैं जो कहते हैं कि परमात्मा का अवतरण होता है और अन्य कुछ लोग कहते हैं कि परमात्मा का अवतरण नहीं होता। इन दोनों के अतिरिक्त, तीसरी प्रकार के लोग वे हैं जो कहते हैं कि, 'परमात्मा का अवतरण होता हो या न होता हो, हमें इस झमेले में पड़ने की क्या आवश्यकता है? हमें तो नित्यप्रति परमात्मा का धन्यवाद कर देना चाहिए, बस इतना ही काफ़ी है।' इन अनेक विचारधाराओं को जानकर विचारवान मनुष्य के मन में प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि इनमें से कौन-सी विचारधारा ठीक है। क्या हम परमात्मा के अवतरण को मानें, न मानें या तटस्थ रहें?

अवतरण के बारे में निर्णय न करना
स्नेह की कमी की निशानी है

इस बात को तो सभी मानेंगे कि सत्य एक होता है। अत: परमात्मा का अवतरण या तो होता होगा या नहीं होता होगा और हमें इन दोनो में से जो बात सच्ची हो, उसे जानना और मानना चाहिए और उससे लाभ उठाना चाहिए।

परमात्मा के अवतरण-जैसे महत्त्वपूर्ण विषय को जानने की कोशिश ही न करना अथवा उसके बारें में कुछ निर्णय करने की चेष्टा ही न करना तो अत्यन्त आलस्य की निशानी है। इससे तो प्रकट होता

है कि प्रभु के प्रति मनुष्य का स्नेह बहुत कम है, वरना, यदि परमपिता परमात्मा का अवतरण होता है तो हमें इस बात को जानकर बहुत खुशी होनी चाहिए क्योंकि परमात्मा हमारे परमपिता हैं, वह कल्याणकारी हैं, दु:खों को मिटाने का उपाय बताने वाले हैं और सभी उत्तम वरदान देने वाले हैं। अपने पिता के शुभ आगमन की बात को जानकर तो शायद किसी मनहूस को ही खुशी न होती होगी। त्रिकालदर्शी, त्रिलोकीनाथ, शान्तिस्वरूप, आनन्दस्वरूप, परमापिता परमात्मा के अवतरित होने पर तो मनुष्यात्माओं को उनसे तीनों लोकों का समाचार सुनने, उनसे उन्हीं के बारे में स्पष्ट रूप से जानने और अनुभव करने, उनकी मार्ग-प्रदर्शना से जीवन को उच्च बनाने तथा उनसे प्यार, शान्ति और आनन्द के रूप में सौभाग्य प्राप्त करने का एक विचित्र अवसर प्राप्त होता होगा। इसलिए, परमात्मा के अवतरण की बात को सुनकर तो हमारे मन में यह जानने की बहुत उत्सुकता होनी चाहिए कि परमपिता परमात्मा का अवतरण किस विधि और किस रूप में होता है और अब कब होगा और क्या हमें भी उनसे मिलने का, उनसे अपनी जन्म-जन्मान्तर की कहानी जानने का तथा आत्मिक शान्ति और सुख पाने का सौभाग्य प्राप्त हो सकेगा ? इस प्रश्न के प्रति उत्साह तथा उत्सुकता प्रकट न करना तो सचमुच परमपिता परमात्मा के प्रति लापरवाही की और लगन की कमी की निशानी है और यह किसी समय बहुत हानिकारक भी हो सकता है क्योंकि यदि किसी मनुष्य के अपने जीवन-काल में परमपिता परमात्मा का अवतरण हो परन्तु वह

अवतरण के बारे में तटस्थ अथवा उदासीन रहे तो सचमुच वह एक अत्यन्त अनमोल अवसर को तथा एक अत्यन्त महान और सर्वोत्तम वस्तु को अपने हाथ से खो बैठेगा और एक अत्यन्त हर्षप्रद स्थिति का लाभ नहीं उठा सकेगा। तो स्पष्ट है कि परमात्मा के अवतरण के विषय में जानने का प्रयत्न ही न करना एक बहुत बड़ी भूल करना है।

परमात्मा के अवतरण में अमान्यता के कारण

आज परमात्मा के अवतरण के बारे में अमान्यता और उदासीनता का एक मुख्य कारण यह भी है कि चिरकाल से परमात्मा के अवतरण के बारे में जो कथाएँ यहाँ प्रचलित हैं अथवा परमात्मा के अवतार के कच्छ-मच्छ, वाराह इत्यादि जिन रूपों का उल्लेख यहाँ मिलता हैं, वे अनुभव पर आधारित नहीं हैं और वह लोगों को विवेक-संगत भी नहीं मालूम होता। उन कच्छ, मच्छ इत्यादि रूपों के प्रति मनुष्य के मन में स्वाभाविक श्रद्धा उत्पन्न नहीं होती और कोई विशेष स्नेह नहीं उमड़ता और मनुष्य सोचता है कि ऐसे-ऐसे अवतारों से हमारा क्या सम्पर्क हो सकता है और हमें क्या मार्ग-प्रदर्शना मिल सकती है अथवा क्या आध्यात्मिक लाभ हो सकता है ?

इसके अतिरिक्त, अवतरण-सम्बन्धी पुरानी कथाओं में अथवा प्रचलित विचारधारा से उन प्रश्नों का भी हल नहीं मिलता जो कि परमात्मा के अवतरण को न मानने वाले लोग प्राय: किया करते हैं। इसलिए आज कोटि-कोटि लोग परमात्मा के अवतरण की बात को न मानते हैं और न ठीक रीति से जानने की चेष्टा ही करते हैं।

अत: इस लेख में हम निष्पक्ष भाव से तथा अनुभव और विवेक के आधार पर इस पहेली का हल स्पष्ट करने की कोशिश करेंगे कि परमात्मा का अवतरण होता है या नहीं होता? और यदि होता है तो कैसे, कब और किस दिव्य कार्यार्थ होता है? हम यहाँ इस बात पर भी विचार करेंगे कि अवतारवाद के बारे में जो प्रचलित मान्यतायें तथा कथायें हैं, उनमें क़ौनसी-कौनसी बातें विवेक और अनुभव के विरुद्ध हैं और जो लोग परमात्मा के अवतरण को नहीं मानते, उनके मुख्य-मुख्य प्रश्नों का क्या समाधान है।

क्या अजन्मा और अकाय परमात्मा का अवतरण हो सकता है?

जो लोग परमात्मा के अवतरण को नहीं मानते, वे अपनी मान्यता की पुष्टि में कई युक्तियाँ देते हैं। (१) वे कहते हैं कि, 'परमात्मा तो **कर्मातीत** हैं, अर्थात् उनका तो कोई कर्म-खाता ही नहीं है। अत: परमात्मा कभी भी, कोई भी शरीर धारण ही नहीं कर सकते क्योंकि शरीर तो आत्मा को पूर्व-जन्मों के कर्मों और संस्कारों ही के हिसाब से मिलता है, किन्तु परम-आत्मा का तो कोई कर्मों का लेखा-जोखा ही नहीं है।'

(२) वे कहते हैं कि - 'परमात्मा तो '**सदामुक्त**' हैं, वह नस-नाड़ी के बंधन में अथवा श्वास-प्रश्वास के बन्धन में भला कैसे आ सकते हैं? (३) पुनश्च, परमात्मा तो **अजन्मा** और **अकाय** हैं अर्थात् वह कभी भी काया नहीं लेते क्योंकि माता के गर्भ से जन्म लेने

वाली शरीरधारी आत्मा की तो कभी-न-कभी 'शारीरिक मृत्यु' भी होती है परन्तु परमात्मा तो दु:ख-हर्त्ता, सुख-कर्त्ता, अमर और दु:ख-सुख से न्यारे माने गये हैं। इसलिए परमात्मा का किसी शरीर में जन्म मानना गोया यह मानना है कि परमात्मा भी दु:ख-सुख और जन्म-मरण के बन्धन में आते हैं। अत:इससे भी स्पष्ट है कि परमात्मा का जन्म नहीं होता क्योंकि परमात्मा के बारे में तो प्रसिद्ध है कि वह कभी भी दु:ख नहीं भोगते और वह सदा ही घाव-चोट से रहित हैं और अजन्मा तथा मृत्युंजय हैं।' इस प्रकार, वे परमात्मा के 'अजन्मा' तथा 'अकाय', 'कर्मातीत' आदि विशेषणों के आधार पर परमात्मा के अवतरण की बात को अमान्य सिद्ध करते हैं और वे पुरानी कथाओं में से हवाले दे दे कर कहते हैं कि 'अवतार सम्बन्धी कथाओं में सीता-हरण के समय राम की व्याकुलता अथवा वियोग-विलाप का और लक्ष्मण को कष्ट में देखकर राम के अत्यन्त दु:ख का या शिकारी का तीर लगने से श्री कृष्ण के देहान्त का जो उल्लेख मिलता है ये तो सदामुक्त, शान्ति के सागर, आनन्द के सागर, कर्मातीत परमात्मा के लक्षणों के अनुकूल नहीं हैं और इससे सिद्ध है कि परमात्मा अवतार नहीं लेते।

क्या अवतरण मानने वाले लोगों के उत्तर ठीक हैं?

अब जिन लोगों का परमात्मा के अवतरण में तथा उससे सम्बन्धित प्रचलित कथाओं में विश्वास है, वे ऊपर बताई गई युक्तियों का प्राय: जो उत्तर देते हैं, उनका संक्षिप्त उल्लेख हम यहाँ करेंगे। (१) वे कहते हैं कि "परमात्मा को 'अज' अथवा 'अजन्मा' कहने

का यह अर्थ नहीं है कि परमात्मा अवतरित ही नहीं होते। यों तो आत्मा को भी गीता में 'अज' (अजन्मा) कहा गया है क्योंकि आत्मा अनादि और अजर-अमर है परन्तु हम जानते हैं कि अनादि आत्मा 'शारीरिक जन्म तो लेती ही है, इसी प्रकार, परमात्मा को भी 'अजन्मा' कहा गया है क्योंकि वह 'स्वयं तो स्वरूप से' अनादि और अविनाशी है; जन्म तो केवल शरीर का होता है न कि परमात्मा का। अत: परमात्मा स्वयं अजन्मा होते हुए भी शारीरिक जन्म अथवा अवतार लेते हैं। (२) दूसरी बात यह है कि संस्कृत भाषा में 'काया' उसको कहते है 'जिसके द्वारा पाप या पुण्य होता हो।' परमात्मा को 'अकाय' कहा गया है क्योंकि वह शरीर द्वारा पाप या पुण्य नहीं करते परन्तु वह शरीर तो लेते हैं। (३) तीसरी बात यह है कि यद्यपि परमात्मा कर्मातीत है तथापि वह सर्वशक्तिवान भी तो है। इसलिए, वह अपनी शक्ति से शरीर अथवा अवतार लेने में समर्थ हैं। अत: वह शरीर तो लेते हैं परन्तु उनका शरीर कर्मजन्य नहीं होता अर्थात् वह किन्हीं पूर्व-कर्मों के फल के रूप में मिला हुआ शरीर नहीं होता बल्कि परमात्मा की अपनी शक्ति से रचा गया शरीर होता है। (४) चौथी बात यह है कि यद्यपि श्री कृष्ण के जीवन में रोना या दु:खी होना दिखाया गया है तथापि दु:ख प्रकट करने के पीछे उनका एक उद्देश्य था। उन्होंने दु:ख इसलिए व्यक्त किया कि मनुष्य मात्र को यह शिक्षा मिले कि सीता-जैसी नारी का अपहरण होने पर मनुष्य को ऐसी वेदना का अनुभव होना चाहिए तथा अपने भ्राता के स्नेह में मनुष्य को ऐसा दु:खी होना

चाहिए जैसे कि लक्ष्मण के घायल होने पर श्री राम ने दु:ख प्रकट किया था। कई लोग कहते हैं कि 'श्रीराम ने तो व्याकुलता अथवा रोने का अभिनय (एक्टिंग acting) मात्र किया था, उन्हें अन्तरात्मा में दु:ख का अनुभव नहीं हुआ था।'

प्रचलित मान्यताओं पर विचार

अब ऊपर, परमपिता परमात्मा के अवतरण की पुष्टि में जो युक्तियाँ दी गईं, उन पर निष्पक्ष भाव से विचार करके देखना चाहिए कि यह युक्तियाँ विवेक-संगत हैं या नहीं और यदि हैं तो कहाँ तक? आप ज़रा सोचिए कि श्रीराम-श्रीकृष्ण आदि, जिनको प्राय: 'अवतार' माना जाता है, ने जो किशोर, बाल्य, युवा आदि अवस्थाएँ भोगीं, उन्होंने एक विशेष कुटुम्ब में विशेष माता-पिता के यहाँ जो जन्म लिया और विशेष प्रकार से जो लालन-पालन लिया, क्या वह सब कर्म-जन्य नहीं था? क्या यह कर्म-फल ही के आधार पर निश्चय नहीं होता कि कौन आत्मा किस कुटुम्ब में, किन माता-पिता के यहाँ जन्म लेगी और कैसी परिस्थितियों में उसका कैसा लालन-पालन आदि होगा? कर्मातीत होते हुए भला कोई बाल्य, युवा आदि अवस्थाएँ कैसे भोग सकता है और विशेष प्रकार के लालन-पालन आदि का भागी कैसे हो सकता है? दूसरी बात यह है कि कर्म-बन्धन से मुक्त होने पर तो मनुष्यात्मा भी शरीर छोड़कर ब्रह्मलोक को चली जाती है, तब ब्रह्मलोक का वासी सदा-मुक्त, कर्मातीत परमात्मा भला किस आधार पर कोई शरीर धारण करता है? आखिर, सर्वशक्तिवान होते हुए भी परमात्मा किसी

नियम के आधार पर ही तो कुछ करता है? अत: प्रश्न उठता है कि वह किस नियम अथवा विधि-विधान से शरीर धारण करता है?

क्या परमात्मा किसी माता के गर्भ से जन्म लेते होंगे?

इसके अतिरिक्त, परमात्मा, जिसे कि सारी सृष्टि का माता-पिता माना गया है, वह किसी लौकिक माता के गर्भ से भला कैसे जन्म ले सकता है? जो सारी सृष्टि का बीजरूप है, वह मनुष्य के बीज से भला कैसे पैदा हो सकता है? जो दूसरों को भी देह के बन्धन से छुड़ाने वाला है, वह स्वयं भला देह के बन्धन में कैसे आ सकता है? पुनश्च, परमात्मा और आत्मा में यही तो एक मुख्य अन्तर है कि आत्मा जन्म-मरण में आती है परन्तु परमात्मा नहीं आता, अत: अजन्मा परमात्मा का आत्माओं की तरह माता के गर्भ से जन्म मानना तो गोया परमात्मा के स्वरूप को ठीक रीति से न जानना है।

क्या परमात्मा का देहान्त होता है; उसे क्लेश होता है?

इसके अतिरिक्त, आप देखेंगे कि अवतारवाद की प्रचलित कथाओं में कट्टर विश्वास करने वाले लोग एक ओर तो कहते हैं कि परमात्मा को 'अकाय' इस कारण कहा जाता है कि वह अपनी काया द्वारा पाप या पुण्य नहीं करता और दूसरी ओर कहते हैं कि श्रीकृष्ण रूप में भगवान ने जो अवतार लिया, उसका ज़रा के बाण द्वारा इसलिए देहान्त हुआ कि उन्होंने श्री राम के रूप में छल से और स्वार्थ

से बाली का वध किया था। उनके इस कथन से तो यह सिद्ध होता हैं कि परमात्मा छल आदि पाप करता है और कि परमात्मा ने एक जन्म में काया द्वारा जो कर्म किया, अन्य जन्म में उसका फल भी भोगा। इससे परमात्मा को जन्म-पुनर्जन्म लेने वाला, दूसरों को बाणों द्वारा अर्थात् हिंसात्मक रीति से मारने वाला और फलस्वरूप स्वयं भी शारीरिक घाव-चोट अर्थात् दु:ख-सुख भोगने वाला मानना तो गोया परमात्मा को भी एक साधारण आत्मा मानना है।

पुनश्च, परमात्मा के बारे में यह कहना कि उसने राम के रूप में अवतार लेकर सीता-अपहरण की घटना पर अथवा लक्ष्मण के घायल होने पर व्याकुलता और दु:ख इसलिए प्रकट किया कि लोगों के सामने आदर्श हो कि उन्हें भी अपने स्वजनों से इतनी प्रीति होनी चाहिए और उनके दु:खी होने पर स्वयं भी इतना ही दु:खी होना चाहिए, कैसा अजीब लगता है! वास्तव में भगवान तो कहते हैं कि मनुष्य को निन्दा-स्तुति, हर्ष-शोकादि की परिस्थिति में एक-रस रहना चाहिए और मोह-ममता का त्याग करके कर्त्तव्य करना चाहिए। तब भला वह स्वयं कैसे दु:खी हो सकते या दु:ख का अभिनय कर सकते हैं? भगवान के लौकिक भाई,स्त्री इत्यादि हो ही कैसे सकते हैं जबकि वह सभी 'आत्माओं के पारलौकिक माता-पिता हैं' और कर्मातीत हैं। अच्छा, भगवान का अवतरण होने पर यदि उनकी लौकिक स्त्री या उनका कोई भाई हो भी सही तो उस सर्वशक्तिवान पति की पत्नी का अपहरण करने का किसे साहस को सकता है?

इस प्रकार, अधिक विस्तार को छोड़कर यदि ऊपर दी-गई इन्हीं कुछेक युक्तियों पर भी आप विचार करें तो आप इसी निर्णय पर पहुँचेंगे कि परमात्मा के अवतरण के बारे में जो प्रचलित मान्यताएँ तथा कथाएँ-उपकथाएँ हैं, उनसे अवतारवाद को न मानने वाले लोगों की युक्तियों का सन्तोषजनक और विवेक-युक्त उत्तर नहीं मिलता।

परन्तु इसका यह अर्थ नहीं हैं कि परमात्मा का अवतरण ही नहीं होता। परमपिता परमात्मा का अवतरण तो नि:सन्देह होता है किन्तु उनके अवतरण की विधि आदि के बारे में आज मनुष्य मात्र को यथार्थ ज्ञान ही नहीं है। अब स्वयं परमपिता परमात्मा की कृपा-प्रसाद के रूप में हमें इस विषय में जो अनुभव तथा विवेक प्राप्त हुआ है, उसका संक्षिप्त उल्लेख हम करेंगे। साथ-ही-साथ, हम परमपिता परमात्मा के परिचय को भी स्पष्ट करेंगे क्योंकि उसके बिना तो अवतरण के रहस्य को समझा ही नहीं जा सकता।

परमात्मा का परिचय

प्रारम्भ में इतनी-सी बात तो स्पष्ट है ही कि परमात्मा का कोई दिव्य रूप तथा धाम भी है जहाँ से कि वे इस संसार में उतरते हैं और किसी मनुष्य-तन में व्यक्त होते हैं। यदि परमात्मा सर्वव्यापक हो अथवा यदि सभी नर-नारी परमात्मा का ही रूप हों तब तो सभी परमात्मा के अवतार हुए; तब तो परमात्मा के 'अवतरण' की चर्चा का कोई महत्त्व ही नहीं रह जाता। अत: इस बात को स्पष्ट करने के लिये गीता में भगवान के महावाक्य हैं कि "मैं अव्यक्तमूर्त्त हूँ अर्थात् मेरा रूप तो

है परन्तु दैहिक (व्यक्त) रूप नहीं है।'' भगवान ने यह भी कहा है कि 'इस आकाश तत्त्व के पार एक अव्यक्त तत्व है, उससे परे और अव्यक्त लोक है, वह मेरा परमधाम है।' भगवान ने यह भी कहा है कि – ''मेरा जन्म और मेरे कर्म दिव्य हैं। मैं साधारण मनुष्य की तरह जन्म नहीं लेता बल्कि प्रकृति को वश करके अथवा साकार होता हूँ।'' इससे यह तो स्पष्ट हो ही गया कि ये जो संसार के सभी मनुष्य हैं, जिन्होंने साधारण जन्म (माता के गर्भ से) लिया है तथा जो लौकिक कर्म कर रहे हैं, ये भगवान के अवतार नहीं हैं – ये सब ऐसी आत्मायें हैं जो कि अपने-अपने कर्मों का फल भोग रही हैं। भगवान इन सब से न्यारे हैं, वह सृष्टि-वृक्ष के अविनाशी बीज-रूप हैं और सृष्टि-चक्र के साक्षी हैं और केवल धर्म-ग्लानि ही के समय इस मानव-जगत में अपने परमधाम से अवतरित होते हैं। कौन है वह परम पावन भगवान और कहाँ है उनका परमधाम ?

भगवान अथवा परमात्मा का स्वरूप

परमात्मा (परम+आत्मा) को जानने से पहले तो यह जानने की ज़रूरत है कि आत्मा का दिव्य रूप क्या है ? यह तो सर्व-ज्ञात है ही कि आत्मा इस पंच-भौतिक देह से भिन्न एक चेतन, अविनाशी ज्योति है। यह सत्ता एक कण अथवा बिन्दु रूप है, सूक्ष्मातिसूक्ष्म है जो कि मानव-देह में

भृकुटि में निवास करती है जहाँ पर कि भारत में भक्त लोग तिलक लगाते हैं। अब, जैसे आत्मा एक ज्योति-बिन्दु अथवा ज्योति-कण है, वैसे ही परमात्मा भी एक ज्योति बिन्दु ही हैं, परन्तु वह ज्ञान, पवित्रता, शान्ति तथा आनन्द की दृष्टि से परम हैं। जैसे किसी को 'महात्मा' कहने से उस आत्मा की लम्बाई-चौड़ाई का बड़ा होना सिद्ध नहीं होता बल्कि गुणों की दृष्टि से महान होना सिद्ध होता है, वैसे ही 'परमात्मा' शब्द – ज्ञान, दिव्यता, शक्ति इत्यादि की पराकाष्ठा अथवा उत्तमता का वाचक है न कि किसी सर्वव्यापक सत्ता का। है तो परमात्मा भी एक ज्योति-बिन्दु ही; तभी तो गीता में महावाक्य हैं कि – "हे वत्स, सभी देहों में व्यक्त ये आत्मायें अथवा पुरुष हैं, मैं इन सभी से उत्तम, इस देह में व्यक्त परम पुरुष अथवा पुरुषोत्तम हूँ।" यदि 'परमात्मा' शब्द किसी सर्वव्यापक सत्ता का वाचक होता तब तो उसके बारे में तो किसी परमधाम से आने का प्रश्न ही न उठता, न ही किसी देह में व्यक्त होने का सवाल होता क्योंकि जो सब जगह और असीम है, उसका तो किसी देह-विशेष की सीमा में आने का कोई अर्थ ही न होता।

गीता के भगवान ने तो स्पष्ट कहा है कि – "जहाँ सूर्य और तारागण का प्रकाश नहीं पहुँचता उससे भी परे मेरा परमधाम है।" अत: मालूम रहे कि भगवान का दिव्य रूप 'ज्योति-बिन्दु' है। इसी कारण भगवान अथवा परमात्मा को 'निराकार' कहा गया है क्योंकि 'बिन्दु' तो निराकार ही है; उसके न कोई कोण होते हैं न रेखाएँ, तब भला उसका आकार कैसे हो सकता है? वह ज्योति-बिन्दु परमात्मा

धर्म-ग्लानि के समय जब मनुष्य-देह में आते हैं, तब उनके उसी रूप को उनका 'साकार' रूप कहा जाता है।

यहाँ यह जानने की ज़रूरत है कि – एक तो है यह मानव-जगत, जिसे 'साकार लोक', 'स्थूल लोक', 'मनुष्य-सृष्टि' इत्यादि नाम दिये जाते हैं। इस लोक के सूर्य, चाँद एवं तारागण के भी पार है दूसरा लोक जहाँ ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर नाम वाले देवताओं का वास है। ये देवता सूक्ष्म, प्रकाशमय एवं दिव्य काया वाले हैं। इनके लोक को 'सूक्ष्म लोक' अथवा 'देव-लोक' कहा जाता है। उससे भी परे है – 'परलोक', 'परम धाम' अथवा 'ब्रह्मलोक' जहाँ आत्माएँ मुक्त होने पर, देह-रहित ज्योति-बिन्दु अवस्था में वास करती हैं। यहाँ ही भगवान अथवा परमात्मा का भी वास है। यहाँ से ही वे धर्म-ग्लानि के समय मनुष्य सृष्टि में आते हैं और मानव-देह धारण करते हैं। यह ही उनका अवतरण है। 'वह देह कैसे धारण करते हैं?' यह एक बड़ी रहस्यमय बात है जिसको ही हम यहाँ स्पष्ट करेंगे। परन्तु पहले यह बता देना ज़रूरी है कि परमात्मा चूँकि विश्व का सदा कल्याण ही सोचते हैं, कल्याण ही करते हैं और स्वयं भी कल्याण स्वरूप ही हैं, इसलिए इनका दिव्य नाम 'शिव' है।

उन्हें ही 'अमरनाथ' भी कहते हैं क्योंकि वह अमर आत्माओं के नाथ हैं। उन्हें ही 'महाकालेश्वर' भी कहा जाता है क्योंकि वे शंकर देवता द्वारा सृष्टि का संहार भी कराते हैं। अत: याद रहे कि 'शिव' और 'शंकर' अलग-अलग हैं। शिव का स्मरण-चिह्न 'शिवलिंग' है जबकि शंकर की मूर्ति देहाकार होती है। 'शिव' परमात्मा है जो कि ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर नाम वाली देवात्माओं के भी रचयिता अर्थात् 'देवाधिदेव' हैं, त्रिमूर्ति हैं और एक ही हैं। उनकी प्रतिमा संसार के सभी धर्मों के लोगों के यहाँ किसी-न-किसी नाम से शिवलिंग के रूप में मिलती है। (परमात्मा के इस दिव्य रूप के बारे में तथा उनके सर्वव्यापक न होने के बारे में एक अलग पुस्तक ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय द्वारा प्रकाशित हुई मिलती है, उसे पढ़ा जा सकता है)।

परमात्मा के दिव्य जन्म अथवा अवतरण की अनोखी रीति

अब वर्तमान समय परमपिता परमात्मा का जो अवतरण हुआ है, उसका अनुभव करके तथा अवतरण के बाद उन्होंने जो ईश्वरीय ज्ञान दिया है उसे समझ करके हम कह सकते हैं कि परमात्मा को 'अजन्मा' कहने का न तो वह अर्थ है जोकि अवतरण-सम्बन्धी प्रचलित कथाओं या विचारों को मानने वाले लोग लेते हैं और न ही वह अर्थ है जो कि परमात्मा के अवतरण में विश्वास न रखने वाले लोग लेते हैं। 'अजन्मा' शब्द का रहस्य बड़ा गहन और समझने योग्य है। परमात्मा

स्वयं तो आत्माओं की तरह स्वरूप से अजन्मा और मृत्युंजय हैं ही अर्थात् अनादि और अविनाशी हैं ही परन्तु उन्हें विशेष तौर पर 'अजन्मा' कहने का भाव यह है कि वह शरीर में जो जन्म या अवतार लेते हैं, वह अन्य आत्माओं के शारीरिक जन्म से 'बिल्कुल न्यारा' होता है। उनका जन्म ऐसी अनोखी रीति से होता है कि उन्हें न तो नस-नाड़ी के बन्धन में आना पड़ता है, न ही वह बाल्य, युवा आदि अवस्थाओं में से गुजरते हैं, न ही मनुष्यों की तरह से उन्हें कोई घाव-चोट लगती या उनका देहान्त होता है, न उन्हें किन्हीं माता-पिता से लालन-पालन लेना पड़ता है और न ही उनके लौकिक पति-पत्नी, भाई-बहन, पिता-पुत्र आदि सम्बन्धी ही होते हैं। आप सोचते होंगे कि ऐसा जन्म भला कैसे हो सकता है ? ऐसे अलौकिक एवं दिव्य जन्म की रीति हम आपको थोड़ा आगे चलकर बताएँगे।

२. इसी प्रकार, परमात्मा को 'अकाय' कहने का न तो यह अर्थ है कि वह काया नहीं लेते और न ही यह अर्थ है कि वह "माता के गर्भ से कोई शरीर तो लेते हैं परन्तु उस शरीर द्वारा कोई पाप या पुण्य नहीं करते।" बल्कि 'अकाय' शब्द का यह अर्थ है कि परमात्मा की कोई 'अपनी काया' नहीं है। जिस प्रकार, हरेक मनुष्यात्मा अपने-अपने पूर्व-कर्मों तथा संस्कारों के आधार पर कोई-न-कोई काया लेती है, परमात्मा इस प्रकार 'अपनी' कोई काया नहीं लेते परन्तु वह एक ऐसी अनोखी रीति से काया लेते हैं कि काया में होते हुए भी वह 'अकाय' रहते हैं। इसका अधिक स्पष्टीकरण भी हम थोड़ा आगे चल कर करेंगे।

३. इसी प्रकार यह भी समझना चाहिए कि परमात्मा 'कर्मातीत' हैं अर्थात् उनका 'अपना' कोई कर्म-लेखा नहीं है। इसलिए, वह कोई 'अपना' शरीर नहीं ले सकते परन्तु वह ऐसी रीति से शरीर लेते हैं कि उन्हें 'कर्मातीत' भी कहा जा सकता है और साकार भी। इसका भाव भी हम आगे स्पष्ट करेंगे।

४. परमात्मा सदा मुक्त हैं। वह मनुष्यात्माओं की तरह देह या कर्मों के बन्धन में नहीं आते। परमात्मा तो अन्य आत्माओं को भी मुक्त करने वाले हैं; यदि वह देह के बन्धन में आ जाएँ तब तो फिर उन्हें भी बन्धन से मुक्त करने वाला कोई चाहिए। अत: मालूम रहे कि उनका देह धारण करना कोई कर्म-बन्धन के कारण नहीं होता और कि वह देह में आकर भी मुक्त रहते हैं।

५. परमात्मा तो सारे मनुष्य-समाज के माता-पिता हैं। वह तो सारी सृष्टि के चैतन्य बीजरूप हैं, अत: वह किन्हीं माता-पिता के यहाँ, किसी मनुष्य के बीज से जन्म नहीं लेते बल्कि उनके जन्म लेने की रीति बहुत न्यारी, प्यारी और अनोखी है।

परमात्मा का जन्म कैसे?

आप सोचते होंगे कि आखिर वह कौन-सी रीति हो सकती है जिसमें ऊपर लिखे सभी लक्षण पाये जाते हों?

परमपिता परमात्मा के उस अलौकिक एवं दिव्य जन्म को 'परकाया प्रवेश' अथवा 'सन्निवेश' कहा जाता है। परमपिता परमात्मा अपने परमधाम अथवा ब्रह्मलोक से अवतरित होकर एक साधारण एवं

वृद्ध मनुष्य के तन में प्रवेश करते हैं। उस मनुष्य को वह 'प्रजापिता ब्रह्मा' नाम देते हैं। वह शरीर उस मनुष्य ने अपने ही कर्मों और संस्कारों के आधार पर लिया होता है, वह ही उसके नस-नाड़ी या श्वास-प्रश्वास के बन्धन में होता है। वह ही उस द्वारा कर्म करता तथा फल भोगता है। उसने तो वह शरीर माता के गर्भ से लिया होता है और अपने माता-पिता से लालन-पालन भी लिया होता है। वह आत्मा 'मुक्त' या कर्मातीत भी नहीं होती। उसके अपने लौकिक मित्र-सम्बन्धी आदि भी होते हैं। परन्तु जब उसकी काया में परमपिता परमात्मा दिव्य प्रवेश करते हैं, तो मानो वह कुछ समय के लिए उसकी काया को उधार लेते हैं अथवा जन-कल्याण के लिए उसका प्रयोग करते हैं। वह सारा दिन अथवा निरन्तर कुछ वर्ष उसमें प्रविष्ट ही नहीं हुए रहते बल्कि जब चाहें उसमें प्रवेश करते हैं और उसके मुख द्वारा ईश्वरीय ज्ञान तथा सहज योग की शिक्षा देकर पुन: परमधाम चले जाते हैं। उस मनुष्य की आत्मा तो उस शरीर में अपने जीवन-काल-पर्यन्त रहती ही है, परन्तु उसके तन में 'परमपिता परमात्मा' नाम वाली आत्मा भी सन्निवेश करती है अर्थात् साथ ही बैठती है, मानो एक ही शरीर रूपी रथ में मनुष्यात्मा रूपी अर्जुन अर्थात् (ब्रह्मा की आत्मा) और परमपिता परमात्मा (गीता-ज्ञान-दाता) दोनों सवार होते हैं।

इस प्रकार, परकाय-प्रवेश के कारण ही परमात्मा को 'अकाय' कहा गया है क्योंकि जिस काया में वह सन्निवेश करते हैं, वह उनकी अपनी (निजी कर्म-जन्य) काया नहीं होती बल्कि जिसकी वह काया

होती है, वह आत्मा भी उसी अपने शरीर में रहती है। उसमें परमात्मा जब चाहें, ज्ञान देने के लिए आ जाएँ और जब चाहें चले जाएँ। इसलिए सदा-मुक्त परमात्मा को, उस देह का, नस-नाड़ी का या श्वास-प्रश्वास का कोई बन्धन नहीं होता और उन्हें बाल्य-युवादि अवस्थाओं में से भी नहीं गुजरना पड़ता और किसी माता के गर्भ से जन्म या किन्हीं मनुष्यों से लालन-पालन भी नहीं लेना पड़ता। इस प्रकार, वे अजन्मा होते हुए भी, 'परकाय प्रवेश' के रूप में 'दिव्य जन्म', अलौकिक जन्म अथवा 'अवतार' लेते हैं क्योंकि उन्हें धर्म-ग्लानि के समय मनुष्यमात्र को ईश्वरीय ज्ञान सुनाना होता है। इस दृष्टिकोण से देखा जाए तो श्रीराम और श्रीकृष्ण आदि को हम 'देवता' ही कहेंगे क्योंकि परमात्मा का अवतरण तो परकाय प्रवेश ही का नाम है। हम ब्रह्मा को भी अवतार नहीं कहेंगे बल्कि ब्रह्मा के तन में जिस परमपिता परमात्मा, ज्योति-बिन्दु शिव का सन्निवेश होता है, उसे ही परमात्मा का अवतरण कहेंगे, ब्रह्मा तो उनका रथ-मात्र है।

परमात्मा के अवतरण से लाभ

परमपिता परमात्मा सारे कल्प में एक ही बार अवतरित होकर शुभ कार्य करते, मनुष्यमात्र को माता-पिता के रूप से प्यार देते, उन्हें सर्वोत्तम शिक्षा देकर और मार्ग-प्रदर्शना देकर उनका कल्याण करते, उन्हें तीनों लोकों और तीनों कालों के अति रुचिकर और लाभदायक रहस्य समझाते हैं और मुक्ति तथा जीवनमुक्ति का मार्ग बताते हैं। वह कच्छ, मच्छ या वाराह आदि के रूप में अवतरित नहीं होते बल्कि

हर कल्प में एक ही बार, कलियुग के अन्त और सतयुग के आरम्भ के संगम समय प्रजापिता ब्रह्मा के तन में अवतरित होकर अथवा साकार होकर, मनुष्य-मात्र को सत्य ज्ञान देते हैं। यह रहस्य अगले लेखों में स्पष्ट होगा। यदि मनुष्यमात्र को परमपिता परमात्मा के अवतरण की इस अनोखी रीति का ज्ञान हो जाए तो वे अवतरण के प्रति तटस्थ या उदासीन नहीं रहेंगे बल्कि उसे जान और मानकर उससे लाभ उठाएँगे।

परमात्मा का अवतरण क्यों और किस तन में?

मनुष्य एक मननशील प्राणी है। वह सभी बातों पर थोड़ा बहुत, यथा-योग्य मनन तो करता ही है। वह हर- एक बात को यों ही नहीं मान लेता बल्कि उस पर कुछ सोचता-विचारता भी है। इसी स्वभाव के अनुसार वह 'परमात्मा के अवतरण' के विषय में भी विचार करता है कि 'परमात्मा को अवतरित होने की क्या आवश्यकता हैं? वह इस दुनिया के झमेले में पड़ता ही क्यों है? यदि वह अवतरित न हो तो क्या होगा? उसके अवतरित होने से क्या और कितना अन्तर पड़ जाता है? दूसरी बात यह है कि परमात्मा तो सर्वशक्तिवान है; वह तो प्रेर कर भी जो चाहे सो करा सकता है। तब भला उसे अवतरित होने की अथवा मनुष्य-तन में प्रवेश करने की क्या आवश्यकता है? वह स्वयं आने की बजाय किसी संदेशवाहक को ही क्यों नहीं भेज देता?'

परमात्मा का अवतरण क्यों?

सतयुग के आरम्भ से लेकर कलियुग के अन्त तक यह जो सृष्टि-चक्र चलता है, इसको समझने से मालूम होगा कि इस सृष्टि में धीरे-धीरे गिरावट ही आती है। आध्यात्मिक दृष्टिकोण से हर युग में, पहले युग की तुलना में धर्म अथवा पवित्रता की कलाएँ कम ही होती आई हैं। हमारे इस जीवन-काल में भी हम देखते हैं कि भले ही विज्ञान का विकास हुआ है परन्तु चरित्र का तो ह्रास ही हुआ है। वर्तमान काल

में प्रचार और प्रसार तो बढ़ा है परन्तु आचार का पतन ही हुआ है। यदि हम पिछले, उससे और उससे भी पिछले समय पर विचार करें तो मानना होगा कि चोरी, डाका, रिश्वत, पापाचार आदि, समय के साथ-साथ बढ़ते ही आये हैं।

तो ध्यान देने के योग्य बात है कि सतयुग से जन्म-पुनर्जन्म लेते-लेते, कलियुग में मनुष्यात्माएँ देह-अभिमानी और विकारी हो जाती हैं। कोई एक भी मनुष्य, चाहे वह साधु या सन्त ही क्यों न हो, काम, क्रोध, लोभ, मोह या देह-अभिमान से पूर्णत: मुक्त नहीं होता। सभी नर-नारी आसुरी प्रवृत्ति वाले हो जाते हैं। संसार में तमोगुण की प्रधानता हो जाती है। मनुष्य माँस-मदिरा का खूब सेवन कर आसूरी आहार-व्यवहार वाले हो जाते हैं। बड़े देश छोटे देशों को हड़प करने की सोचते हैं। वे एक-दूसरे को पछाड़ने के लिए बड़े भयानक अस्त्र-शस्त्र, बम आदि बनाने की होड़ में लग जाते हैं और कूटनीति तथा षडयन्त्र रचते हैं। ईर्ष्या-द्वेष, मतभेद आदि मनुष्य के मन में खूब अपना डेरा जमा लेते हैं और मनुष्य-मनुष्य तथा राष्ट्र-राष्ट्र के बीच का व्यवहार पूर्णत:स्वार्थ और कुटिलता पर आधारित होता है। हिंसा ही से सबके हाथ और हृदय तथा नीति और रीति रंग जाते हैं। मानो इस संसार पर अज्ञान की घोर रात्रि छाई होती है और विषय-वैतरणी खूब ठाठे मार रही होती है। परिणामस्वरूप, मनुष्य-सम्प्रदाय का कुछ भाग तो अत्यन्त दु:खी और अशान्त होता है और शेष भाग, संसार में ये सब अनाचार, लूट-खसूट, बे-ईमानी और मार-काट देखकर सोचता है कि

परमात्मा तो है ही नहीं और सदाचार से तो मनुष्य इस संसार में चल ही नहीं सकता और कि भ्रष्टाचार तथा विकार ही को अपनाना चाहिए ताकि धन-मान की प्राप्ति हो।

इस संसार का क्या होगा?

ऐसी अवस्था को देखकर कुछ रहे हुए धर्म-प्रिय लोग भी निराश हो जाते हैं और सोच में पड़ जाते हैं कि आखिर इस संसार का क्या होगा? सरकार और नेता तथा जनता और अभियन्ता, सभी इस स्थिति को सुधारने में स्वयं को असमर्थ पाते हैं क्योंकि चारों ओर फैल रहे घोर पापाचार को वे कैसे रोक सकते अथवा सुधार सकते हैं, विशेषकर जबकि वह स्वयं पूर्णत: निर्दोष एवं समर्थ नहीं हैं। सभी चाहते तो यही हैं कि इस संसार में सद्व्यवहार, स्नेह, सतोगुण, सहानुभूति, सदाचार और सत्धर्म को कोई पुनर्जीवित करें। भला ऐसी अवस्था में परमात्मा के अवतरण के सिवा और चारा ही क्या है?

क्या कोई देह-बन्धन वाला आत्मा, मनुष्य-मात्र को देह-अभिमान (Body-Consciousness) से निकाल कर आत्माभिमानी बना सकता है? क्या विकारी मनुष्य, दूसरों को पूर्ण पावन अथवा देवता बना सकता है? क्या ऐसे भ्रष्टाचारी और पतित संसार को कोई मनुष्य श्रेष्ठाचारी तथा पावन बनाने में समर्थ हो सकता है? स्पष्ट है कि नहीं हो सकता। क्या सारे दु:खी और अशान्त संसार को कोई मनुष्य सुख और शान्ति से सींच सकता है अथवा तमोगुण को मिटाकर सतोगुण ला सकता है? सभी कहेंगे कि नहीं, यह कार्य किसी भी मनुष्य द्वारा

नहीं हो सकता। अत: इस महान कार्य को करने के लिए परमापिता परमात्मा को स्वयं आना पड़ता है।

मानव के कर्म सुधारने के लिए अवतरण आवश्यक

परमात्मा को तीनों लोकों में कुछ भी अप्राप्त नहीं है। परमात्मा में कोई भी इच्छा या कमी नहीं है कि जिसकी पूर्ति के लिए वह आतुर हो। परन्तु जब मनुष्य-सम्प्रदाय कर्म-भ्रष्ट हो जाता है तो उसे श्रेष्ठ कर्म का पाठ पढ़ाने के लिए, स्वयं परमात्मा को आना पड़ता है क्योंकि उनके सिवा कर्म की गहन गति को अन्य कोई भी पूरी रीति नहीं जानता। यदि मनुष्य कर्म-गति को जानता होता तो उससे भला बन्धता ही क्यों ? जब मनुष्य दैवी गुणों को छोड़कर आसुरी स्वभाव वाले हो जाते हैं, तब पुन: उनमें पवित्रता और दिव्य गुणों की धारणा के लिए, आवश्यक ज्ञान देने के लिए, स्वयं कर्मातीत और सदा-मुक्त परमात्मा को उनके सम्मुख आकर ज्ञान तथा योग की शिक्षा देनी पड़ती है क्योंकि उनके सिवा, कर्मों में बन्धे हुए मनुष्यों को मुक्ति और जीवन्मुक्ति का ज्ञान कोई दे ही नहीं सकता। प्रसिद्ध है कि 'ज्ञान द्वारा ही मनुष्य देवता बनता है अथवा नर श्री नारायण पद को और नारी श्री लक्ष्मी पद को प्राप्त होते हैं'। अत: जब देव पद या नारायण पद से गिर कर, संसार में सभी, साधारण नर या नारी की अवस्था को प्राप्त होते हैं तो उन्हें पुन:नर से श्री नारायण तथा नारी से श्री लक्ष्मी पद प्राप्त कराने के लिए स्वयं परमात्मा को आना पड़ता है क्योंकि यह ज्ञान अन्य किसी के पास नहीं होता कि आत्मा, नारायण के पद से गिर

कर, कंगाल और मोहताज नर की अवस्था को कैसे और कब प्राप्त हुई। नर को श्री नारायण बनाने वाला स्वयं तो इन दोनों से उच्च और दोनों का ज्ञाता ही होना चाहिए। अत: परमपिता परमात्मा, जो ही श्री नारायण से नर और नर से श्री नारायण बनने की कर्म-कहानी के ज्ञाता हैं, वह स्वयं ही अवतरित होते हैं क्योंकि यदि वह इस रहस्य को न समझाएँ तो पुन: नर, श्री नारायण पद को कैसे प्राप्त कर सके?

अत: परिस्थितियाँ ही परमात्मा के अवतरण की आवश्यकता को प्रमाणित करती हैं। जैसे किसी नाटक में विशेष प्रकार की परिस्थिति में एक विशेष अभिनेता (Actor) का आना होता है, वैसे ही इस मनुष्य-रूपी विराट नाटक में, कलियुग के अन्त में, धर्म की अत्यन्त ग्लानि के समय, सतयुग की पुन: स्थापना के लिए, स्वयं परमपिता परमात्मा को आना पड़ता है। इस विश्व-नाटक में उनका भी एक निश्चित समय पर अपना पार्ट है, इसमें झंझट में पड़ने की कोई बात नहीं, क्योंकि परमात्मा देह-बन्धन या कर्म-बन्धन में नहीं फँसते और झंझट उन पर प्रभाव नहीं डालते। कल्याणकारी (शिव) परमात्मा संसार के कल्याण के लिए आते हैं और कल्प में एक ही बार अवतरित होकर सभी का कल्याण कर जाते हैं।

परमात्मा प्रेरणा द्वारा कार्य क्यों नहीं करते?

कई लोग कहते हैं कि परमात्मा तो सर्वशक्तिवान हैं, तब उसे अवतरित होने की क्या आवश्कता है? वह तो प्रेरणा से भी सारी सृष्टि को पलट सकता है। इस विषय में ध्यान देने योग्य बात यह है कि

कलियुग के अन्त में, धर्म-ग्लानि के समय तो मनुष्यों का योग ही भ्रष्ट होता है और वे तमोगुणी स्वभाव वाले होते हैं तथा परमपिता परमात्मा को जानते भी नहीं हैं। अत: जबकि उनकी बुद्धि का योग ही परमात्मा के साथ नहीं होता तो वे परमात्मा की प्रेरणा कैसे प्राप्त कर सकते हैं? यदि उनकी बुद्धि का योग परमात्मा के साथ होता तब तो वे पवित्र होते और सुखी होते। तब तो परमात्मा के अवतरित होने और ज्ञान देने की आवश्यकता ही न होती। उनकी बुद्धि का योग भ्रष्ट हो जाने तथा उनके देह-अभिमानी बनकर दु:खी हो जाने के कारण ही तो परमात्मा के अवतरित होने की आवश्यकता होती है और जिस की बुद्धिभ्रष्ट हो, मन मैला हो, संस्कार विकारी हों, वह भला परमात्मा की पवित्र प्रेरणाओं को पकड़ और समझ ही कैसे सकता है? उसे तो खूब समझाने, सिखाने और झंझोरने की आवश्यकता होती है। अत: परमपिता परमात्मा को स्वयं ही अवतरित होना पड़ता है क्योंकि मनुष्यात्माएँ कानों द्वारा ज्ञान सुन सकती हैं और इस कारण ज्ञान सुनाने के लिए परमपिता परमात्मा को भी मनुष्य-तन का आधार लेकर मुख द्वारा ज्ञान सुनाना पड़ता है। प्रेरणा द्वारा भला इतना विस्तृत ज्ञान कैसे स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है?

केवल ज्ञान सुनाने ही की बात नहीं बल्कि परमात्मा को दिव्य आचरण करके दिखाना पड़ता है। उन्हें मनुष्य मात्र के सम्मुख कर्म का आदर्श उपस्थित करना पड़ता है। उन्हें स्वयं ही श्रेष्ठ कर्म करके दिखाना पड़ता है। उन्हें सदाचार और सद्व्यवहार की व्याख्या केवल

शाब्दिक रीति से ही नहीं बल्कि आचरण के रूप में देनी पड़ती है। तभी मनुष्यमात्र उनकी मार्ग-प्रदर्शना से पावन बनते, दिव्यगुण धारण करते तथा आचरण में श्रेष्ठता लाते हैं। वह अवतरित होकर मनुष्यमात्र को माता-पिता, शिक्षक और गुरु रूप से मिलते हैं, जो कि मनुष्यमात्र के लिए एक सबसे विलक्षण और श्रेष्ठ अनुभव होता है। उनका साक्षात् रूप में संग पाकर नर-नारियों के हृदय की कलियाँ खिल उठती हैं, उनका मन-रूपी मोर नाच उठता है,उनका चित्त उनकी ज्ञान-बाँसुरी सुनकर एक अलौकिक मस्ती में झूम उठता है और उनका एक न्यारा प्यार पाकर आत्माओं में एक नया जीवन आता है। उनके अवतरण से सारा संसार हरा-भरा हो जाता है, जंगल में मंगल हो जाता है। विकारों की गरमी से झुलसी हुई दुनिया में, पवित्रता की सदा-बहार और शीतलता फिर से आ जाती है। अहा! परमात्मा का अवतरण तो विश्व-नाटक का एक सबसे बड़ा वृत्तान्त है, एक सबसे शुभ, सुन्दर और सुहावनी घड़ी है परन्तु आज मनुष्य मात्र अपने उस अति प्यारे पिता के अवतरण की विधि और सिद्धि से भी परिचित नहीं हैं! आज लोग अनेकानेक ग्रन्थों में परमात्मा के अवतरित होने के बाद हुए महाभारत इत्यादि जैसे लड़ाई-झगड़ों तथा बाद में देश और संसार की हालत बिगड़ने की बातें पढ़-पढ़ कर और सत्यता को न जानकर परमात्मा के अवतरण की बात से इतना ऊब चुके हैं कि उनके मन में यह उत्कण्ठा नहीं होती कि परमात्मा अवतरित होंवें और मनुष्य-मात्र को अपने प्रेम, माधुर्य और पवित्रता से सीचें।

परमात्मा के अवतरण से विश्व-परिवर्तन

आज कई लोग पूछते हैं कि परमात्मा के अवतरण से क्या अन्तर पड़ता है? हम अपने अनुभव के आधार पर पूछते हैं कि परमात्मा के अवतरण से क्या अन्तर नहीं पड़ता? सभी नर-नारियों का देवपद को प्राप्त करना अथवा मुक्ति को प्राप्त करना, सभी का विकारी से निर्विकारी अथवा पतित से पावन होना, सभी तत्वों का भी तमोप्रधान से सतोप्रधान बनना, सभी दु:खों का अन्त होकर, सभी सुखों का सदाकाल के लिए आना। रोग, शोक, काल, निर्धनता, दुर्घटनाओं आदि से छूटकर सदा शान्त और सदा सुखी जीवन को प्राप्त करना, सारे संसार का, जड़-चेतन का नव-निर्माण अथवा काया-कल्प होना, यह क्या कम बात है? यह किसी कवि की कल्पना नहीं बल्कि आँखों देखा अथवा स्वयं अनुभव में आया हुआ सत्य है जो कि वर्तमान समय पुन: हो रहा है। परमात्मा का अवतरण और कार्य संसार का ऐसा महत्त्वपूर्ण वृत्तान्त है जिसके बाद संसार में कोई विकारी, तमोगुणी, निर्धन, दु:खी या रोगी नहीं रहता, कोई झगड़ा, कलह या क्लेश नहीं होता, कोई प्राकृतिक आपदा नहीं आती, किसी भी प्रकार का कोई भी कष्ट नहीं रहता। वर्तमान समय परमपिता परमात्मा शिव के अवतरण से ऐसा ही परिवर्तन संसार में लाने का ईश्वरीय कार्य शुरू हो चुका है, जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण उन नर-नारियों का जीवन है जो अत्यन्त पतित अवस्था से उठ कर आज पावनता की सुदृढ़ नींव पर आसीन होकर, योग का आनन्द, ज्ञान का सुख और पवित्रता का हर्ष पाकर

अपने जीवन के दृष्टान्त से दूसरों में भी पावनता का पौधा लगा रहे हैं।

परमात्मा स्वयं अवतरित होने की बजाय – किसी सन्देश-वाहक को क्यों नहीं भेज देता?

परन्तु इन सभी बातों से अनभिज्ञ लोग पूछते हैं – "परमात्मा स्वयं अवतरित होने की बजाय किसी संदेश-वाहक अथवा पैग़म्बर को ही क्यों नहीं भेज देते? वे लोग यह नहीं सोचते कि संसार में जितने भी प्रभावशाली मनुष्य – इब्राहिम, बुद्ध, ईसा, शंकराचार्य, नानक इत्यादि के रूप में आये उनके आने से सारे संसार में सुख-शान्ति की स्थापना नहीं हुई। उनके आने से सतयुग की पुन: स्थापना भी नहीं हुई। उन्होंने मनुष्यों को देवपद की प्राप्ति नहीं कराई। हाँ, उनके आने से अल्पकाल के लिए जनता पर कुछ प्रभाव पड़ा परन्तु उनके नाम से जुड़ा हुआ एक नया मत स्थापित हो गया और मत-मतान्तरों में वृद्धि हो गई, मत-भेद बढ़ गए और उसके कारण झगड़े भी बढ़ गए। अत: सारे संसार को पावन बनाने का कार्य तथा नई, सतयुगी सृष्टि की पुन: स्थापना का कार्य परमपिता परमात्मा ही का कार्य है, जो ही एकमात्र सर्वशक्तिवान और पतित-पावन हैं।

कोई भी संदेश-वाहक, मनुष्यमात्र के सम्मुख दैवी प्रवृत्ति का, अर्थात् देवताओं जैसे जीवन का, आदर्श उपस्थित नहीं कर सकता क्योंकि उस समय दैवी प्रवृत्ति वाला तो कोई आत्मा होता ही नहीं कि जिसको परमात्मा संदेश देकर भेजे। कोई भी संदेश-वाहक, मनुष्यात्माओं

को परमपिता के जैसा प्यार और आनन्द भी नहीं दे सकता जो कि मनुष्यों के जीवन को पलटने के लिए ज़रूरी है और वह परमात्मा के जैसी रीति से मनुष्य को आध्यात्मिक शिक्षा भी नहीं दे सकता। पुनश्च, सतयुग की पुन: स्थापना के लिए तो आसुरी सम्प्रदायों का महाविनाश भी प्राकृतिक आपदाओं आदि के द्वारा होना आवश्यक है। यह कार्य भी कोई संदेश-वाहक नहीं कर सकता। परमपिता परमात्मा तो परमात्मा ही है और अन्य आत्माएँ, आत्माएँ ही हैं। दोनों में रात-दिन का अन्तर है। इस सृष्टि-नाटक में एक का कार्य दूसरा कोई नहीं कर सकता, तब परमात्मा का कार्य भला अन्य कोई कैसे कर सकता है? परमात्मा का गुण, कर्म, स्वभाव, प्रभाव अपनी प्रकार का निराला और सर्वोत्तम है और पतित मनुष्य को पावन तथा सुखी बनाना, पतित-पावन सुखदाता परमात्मा ही का कार्य है, जिसे करने के लिए उन्हें स्वयं आना पड़ता है। वर्सा, सदा पिता ही अपने पुत्रों को देता है और पवित्रता, सुख तथा शान्ति का अविनाशी वर्सा देने के लिए स्वयं परमपिता परमात्मा ही को आना पड़ता है न कि किसी आत्मा रूपी वत्स को। पुनश्च, जब संसार में अत्यन्त धर्म-ग्लानि होती है तब अन्य कोई ऐसी आत्मा ही नहीं होती जो कि स्वयं मुक्त हो अथवा जो कि जीवनमुक्त अवस्था या उससे उच्च अवस्था वाली हो। उस समय तो लगभग सभी आत्माएँ पृथ्वी पर आकर जन्म-मरण में आते-आते स्वयं भी पतित और जीवनबद्ध हो गईं होती हैं और जो थोड़ी आत्माएँ परमधाम में रह गईं होती हैं, वे भी ऐसी उच्च अवस्था वाली नहीं होतीं

कि दूसरों को मुक्ति या जीवनमुक्ति के लिए मार्ग-प्रदर्शना दे सकें। अत: यह कार्य करने के लिए स्वयं परमात्मा ही को आना पड़ता है।

परमात्मा किस तन में अवतरित होते हैं?

परमपिता परमात्मा को, अवतरित होकर, ऐसा ज्ञान देना होता है कि जिससे मनुष्यों की प्रवृत्ति सुधरे, अर्थात् परमपिता परमात्मा को तो यही शिक्षा देनी होती है कि गृहस्थ या व्यवहारिक जीवन में रहते हुए अथवा कर्म करते हुए भी काम, क्रोध, लोभ, मोह तथा अहंकार से मन्सा, वाचा एवं कर्मणा निर्विकारी रहना है। अत: परमात्मा किसी कर्म संन्यासी का या घर-बार को छोड़कर गए हुए किसी वैरागी का या स्त्री को नागिन मानने वाले तथा संसार को मिथ्या मानने वाले किसी संन्यासी का तन नहीं लेते। बल्कि उन्हें किसी घर-गृहस्थ वाले ऐसे ही मनुष्य का तन लेना पड़ता है जो कि परमात्मा की आज्ञा मानकर पहले स्वयं भी युगल अथवा गृहस्थ जीवन में सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करके दूसरों के आगे आदर्श बने तथा ईश्वरार्थ तन-मन-धन अर्पण करके ईश्वरीय सेवा अर्थात् ज्ञान-सेवा में लगा दे। परमात्मा को ऐसे ही मनुष्य का तन लेना पड़ता है जो कि लोक-लाज और कलियुगी आसुरी मर्यादा को तिलांजली देकर सम्पूर्ण रूप से दिव्य बनने का साहस करने वाला हो और उसके लिए दृढ़तापूर्वक पुरुषार्थ करने वाला हो।

परमात्मा को ऐसे मनुष्य तन में अवतरित होना पड़ता है कि जिस मनुष्यात्मा ने, अन्य किसी मनुष्यात्माओं की तुलना में, सतयुग के आरम्भ से लेकर कलियुग के अन्त तक जन्म-मरण लेकर, सुख-दु:ख

के, पवित्रता तथा अपवित्रता के, ज्ञान और भक्ति के, राजा पद और प्रजा के, सभी जीवनों का खूब अनुभव किया हो और जो वर्तमान जीवन में भी न बहुत उच्च हो, न ही एकदम अप्रतिष्ठित एवं अमान्य कुल का हो, बल्कि जिसने सुख-दु:ख, गृहस्थ-व्यवहार, मान-प्रतिष्ठा, राजा-प्रजा, भक्त, वेदान्ती, गीता पाठी, साधक आदि-आदि सभी प्रकार के जीवन का खूब अनुभव पाया हो।

ऐसा मनुष्य केवल वही होता है जिसने कि सतयुग के आरम्भ में पूज्य श्री नारायण के रूप में राज्य-भाग्य भोगा होता है और इस प्रकार, २१ जन्म सतयुग और त्रेतायुग में दैवी सम्प्रदाय में राजा, रानी अथवा प्रजा के रूप में पूर्ण सुख-शान्ति भोगी होती और फिर, द्वापर युग तथा कलियुग में कुल ६३ जन्म शिरोमणि भक्त राजा अथवा पूजक प्रजा के रूप में भोगे होते हैं। इस मनुष्य के अन्तिम अर्थात् चौरासीवें जन्म के अन्त में ही परमपिता परमात्मा परकाय प्रवेश करते हैं और इसको 'प्रजापिता ब्रह्मा' नाम देते हैं।

अवतरण वृद्ध तन में

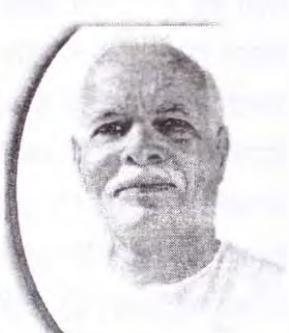

परमात्मा सारी मनुष्य-सृष्टि के परमपिता हैं। अत: उन्हें परकाय प्रवेश के लिए वृद्ध आयु वाला ही तन लेना पड़ता है

क्योंकि उस द्वारा ही उन्हे मनुष्यात्माओं को परमपिता के स्वरूप की भासना,

प्यार, लालन-पालन,शिक्षा और सावधानी देनी पड़ती है। इसके अतिरिक्त, ज्ञान देने के लिए और मनुष्यों को श्रेष्ठ कर्म करके दिखाने के लिए भी परमात्मा को अनुभवी, प्रयोग में आ चुके हुए वृद्ध तन की आवश्यकता होती है। परमात्मा को किन्हीं माता-पिता का लालन-पालन तो लेना नहीं होता, अत: वह किशोर अवस्था वाले सुकोमल तन में अवतरित नहीं होते। परमात्मा को तो लगभग पचास वर्षो में अपना कार्य पूरा करना होता है। अत: वह वानप्रस्थ अवस्था में प्रवेश हुए एक साधारण मनुष्य (प्रजापिता ब्रह्मा) के तन में ही प्रवेश करके, उसका तन ईश्वरीय कर्त्तव्यों के लिए मानो 'उधार' (Loan) लेते हैं।

अन्त के समय पश्चाताप

इस प्रकार, परमपिता परमात्मा जिस तन का आधार लेते हैं, उस ही को लेने में बहुत ही महत्त्वपूर्ण रहस्य हैं जिन्हे केवल परमात्मा ही जानते हैं और वह ही इन रहस्यों को समझाते भी हैं। परन्तु मूढ़मति लोग उस उच्च मनुष्य अथवा महामानव के पूर्व-जन्मों को न जानने के कारण तथा उसके तन द्वारा होने वाले ईश्वरीय चरित्रों को भी न समझने के कारण उस मनुष्य को सही रीति से पहचानते नहीं हैं। वे परमपिता परमात्मा के स्वरूप, उनके अवतरण की रीति और जिस तन में वह अवतरित होते हैं, उसका रहस्य न जानने के कारण परमपिता परमात्मा के महावाक्यों से लाभ उठाने से वंचित रह जाते हैं और अन्त में जब महाविनाश की घड़ी आती हैं तो पश्चाताप करते हुए कहते हैं – 'हे प्रभो, आप साधारण तन में अवतरित भी हुए, आपने

मनुष्यमात्र के कल्याण के लिए ज्ञान भी दिया और चरित्र भी किए परन्तु अफ़सोस कि हम आपको उस साधारण तन में न पहचान सके! परमात्मा के अवतरित होने पर उनकी पहचान कैसे हो – इसके बारे में आगे के लेखों से स्पष्ट होगा।

परमपिता परमात्मा के अवतरण के उद्देश्य

:— क्या कच्छ, मच्छ इत्यादि अवतार हैं? :—

भारत में बहुत-से लोग यह तो मानते हैं कि परमपिता परमात्मा का अवतरण होता है परन्तु वे विवेक-संगत रीति से यह नहीं जानते कि परमात्मा का अवतरण किस रूप में, कैसे और किस लिए होता है और उनकी कार्य-विधि क्या है? श्रीमद्भागवत में भगवान के कच्छ (कच्छप), मच्छ (मत्स्य), वाराह, नृसिंह आदि के रूप में अवतरित होने की जो कथाएँ लिखी हैं, विचारवान व्यक्ति परमात्मा के अवतरण की उस तरह से सम्भावना नहीं मानतें। हाँ, उनका विवेक इतना जरूर कहता है कि जब संसार में दु:ख और क्लेश बहुत बढ़ जाता होगा तब शायद परमात्मा अवतार लेते होंगे। परन्तु परमात्मा हैं कौन, वह कहाँ से अवतरित होते हैं, कैसे और किस रूप में अवतरित होते हैं, इन बातों को वे स्पष्ट और विवेक युक्त रीति से नहीं जानते।

अत: अब इस लेख में, परमपिता परमात्मा के बारे में ऊपर बताए गये प्रश्नों पर कुछ अनुभव-जन्य तथा ईश्वरीय महावाक्यों पर आधारित ज्ञान का उल्लेख करेंगे। साथ-ही-साथ पुराणों में अवतार सम्बन्धी जो कथाएँ हैं अथवा रूढ़ि से जो मान्यताएँ इस विषय में चली आती हैं, उन पर भी विचार करके देखेंगे कि वे कहाँ तक संगत हैं और कहाँ तक असंगत हैं।

परमात्मा किस लिए अवतरित होते हैं?

:— अवतरण से हर मनुष्य को लाभ :—

सबसे पहले तो हमें यह जानना चाहिए कि परमपिता परमात्मा का अवतरण किस लिए होता है और वह उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए, किस प्रकार कार्य करते हैं। आप देखते हैं कि लोग हमेशा परमात्मा को दु:ख दूर करने और सुख देने के लिए ही पुकारते हैं। वे परमात्मा से मुक्ति और जीवनमुक्ति माँगते हैं और उससे प्रार्थना करते हैं कि- 'हे प्रभो, हमें सद्बुद्धि अथवा दिव्य बुद्धि दो, हमारे विषय-विकार मिटाओ, हमें काल के पंजे से छुड़ाओ और हमें अपना प्यार और आनन्द दो। हे प्रभो, हमें आत्मिक शक्ति और बल दो तथा हमें सन्मार्ग पर लगाओ, हमें अज्ञान-अँधेरे से निकाल कर ज्ञान प्रकाश दो।' सारे संसार के लोग, चाहे वे किसी भी धर्म के हों, वे परमात्मा से इस प्रकार की ही कोई-न-कोई प्रार्थना करते हैं। अत: यह निश्चित है कि परमात्मा का अवतरण मनुष्यमात्र की इसी इच्छा अथवा इन्हीं शुभ कामनाओं को पूर्ण करने के लिए ही होता होगा। यदि मनुष्यमात्र की यह इच्छा पूर्ण नहीं होती तो समझना चाहिए कि जिसे परमात्मा का अवतार समझा जा रहा है, वास्तव में वह परमात्मा का अवतार नहीं है। हाँ, वह कोई असामान्य अथवा असाधारण मनुष्य हो सकता है।

परमात्मा तो सभी आत्माओं के पारलौकिक पिता हैं। कोई आत्मा उन्हें याद करता हो या न करता हो, वह उनका पुत्र तो है ही, अत: जब परमात्मा अवतरित होते हैं, तो उन दयानिधि एवं प्रेम के सागर

प्रभु से अथवा उन कल्याणकारी सुख-दाता परमपिता से सबको, शीघ्र या देर से, कुछ-न-कुछ पैतृक सम्पत्ति तो मिलनी ही चाहिए। पुनश्च; परमात्मा अविनाशी हैं, सर्व समर्थ हैं, सारे जगत् की आत्माओं के परमपिता हैं, तो सभी को उनसे कुछ अविनाशी, स्थायी अथवा काफ़ी समय तक चलने वाली प्राप्ति तो होनी ही चाहिए, उनके अवतरण से सारे जगत का सुधार होना चाहिए, सभी आत्माओं का थोड़ा-बहुत उद्धार होना चाहिए और जड़-चेतन सब में एक नवीनता, एक पवित्रता और सात्त्विकता आ जानी चाहिए, वरना परमात्मा और मनुष्यात्माओं की कार्य-क्षमता अथवा प्रभाव में अन्तर ही क्या हुआ?

अतः यह बात खूब याद कर लेनी चाहिए कि परमात्मा का अवतरण किसी एक मनुष्य या दस-बीस व्यक्तियों को ज्ञान देने के लिए या हाथ में गदा अथवा चक्र लेकर किन्हीं लोगों को मार कर अपने ऊपर हिंसा का दोष लेने के लिए नहीं होता, बल्कि संसार को पवित्रता और सदाचार का पाठ पढ़ाकर मनुष्य मात्र के जीवन को एक नया मोड़ देने के लिए होता है और जो लोग उसको न मानें उन्हें इस सृष्टि-मंच से हटाकर परमधाम ले चलने के लिए होता है। परमात्मा किन्हीं एक-दो मनुष्यों के लिए अवतरित नहीं होते, वह कोई अस्थाई कार्य करने के लिए भी नहीं आते। बल्कि, वह यहाँ चिरकाल तक के लिए अथवा युगों तक के लिए सुख-शान्ति स्थापित करने आते हैं और यही विशेष बात तो लोग परमात्मा से चाहते हैं। यदि आज सुख हो और कल दुःख हो अथवा आज पारस्परिक मेल-मिलाप हो और परसों से फिर कोई झगड़ा-रगड़ा खड़ा

हो जाय तो फिर परमात्मा के आने से विशेष लाभ ही क्या हुआ? परमात्मा के आने से झंझट और संकट कोई दो-ढाई हज़ार वर्षो के लिए तो मिटने ही चाहिएँ और परमात्मा के अवतरण के बारे में सत्य-ज्ञान प्राप्त करने पर आप जानेंगे कि वास्तव में होता भी ऐसा ही है।

अवतरण के बाद परमात्मा की कार्य-विधि

ऊपर की पंक्तियों द्वारा परमात्मा के अवतरण के उद्देश्य पर प्रकाश डाल चुकने के बाद अब हम इस बात को कुछ स्पष्ट करेंगे कि परमात्मा इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए क्या कार्य करते तथा कराते हैं। आप जानते है कि मनुष्य ही इस संसार का मुख्य प्राणी हैं। मनुष्य के बिगड़ने से यह सारी सृष्टि बिगड़ जाती है और यदि मनुष्य-सम्प्रदाय दिव्य गुण सम्पन्न हो जाए तो यही सृष्टि स्वर्ग हो सकती है। अत: इस संसार में सुख-दु:ख का होना मनुष्यों के कर्मों पर आधारित है। आप यह भी मानेंगे कि मनुष्य के कर्म उसकी मनसा पर निर्भर करते हैं। परन्तु मनुष्य की मनसा पर नियन्त्रण कर सकने वाली तो उसकी बुद्धि ही है। अत: यदि मनुष्य की बुद्धि भ्रष्ट हो जाय, ईश्वर से विमुख हो जाय, सदाचार और पवित्रता से हट जाय तो इस सृष्टि में घोर पाप, अत्याचार, अन्याय, दु:ख और अशान्ति हो जाती है। इस लिए परमपिता परमात्मा की कार्य-विधि यह है कि वे मनुष्यों की बुद्धि को दिव्य, पावन अथवा योग-युक्त बनाते हैं। वह मनुष्य की बुद्धि को ज्ञान का अंकुश देते हैं। वह मनुष्य की बुद्धि की लगन विषय-वासनाओं से हटाकर आत्म-स्मृति तथा ईश्वरीय स्मृति में स्थित

कराते हैं। अत: संक्षेप में यों कहें कि वह इस कार्यार्थ मनुष्यात्माओं को ईश्वरीय ज्ञान तथा सहज बुद्धि-योग की शिक्षा देकर उनके जीवन में परिवर्तन लाते हैं अर्थात् उन्हें तमोगुणी से सतोगुणी बनाते हैं। इसके लिए वह स्थान-स्थान पर ईश्वरीय विश्वविद्यालय अथवा ज्ञान-यज्ञ स्थापित करते हैं, जहाँ मनुष्यात्माओं को यह ज्ञान ओर योग आदि सहज सुलभ होता है।

इस प्रकार मनुष्यात्माओं के दैवी सम्पत्ति सम्पन्न बनने, योग-युक्त होने तथा श्रेष्ठाचारी होने के फलस्वरूप इस सृष्टि का काया-कल्प हो जाता है, यह पतित से पावन, आसुरी से दैवी, तमोप्रधान से सतोप्रधान, दु:खी से सुखी, नरक से स्वर्ग अर्थात् कलियुगी से सतयुगी बन जाती है और फिर सतयुग और त्रेतायुग में दो युगों तक यहाँ कोई दु:ख या क्लेश या असुर नहीं रहता और परमात्मा के अवतरण की आवश्यकता भी नहीं पड़ती। सर्वशक्तिवान और परम बुद्धिवान परमपिता परमात्मा द्वारा एक बार कार्य होने के बाद बारम्बार उनके अवतरण की आवश्यकता ही भला क्यों होनी चाहिए?

परमात्मा का अवतरण किस रूप में ?

स्वाभाविक बात है कि यह ईश्वरीय ज्ञान देने तथा सहज बुद्धि योग सिखाने के लिए परमपिता परमात्मा को मनुष्य-तन में अवतरित होना पड़ता है, परन्तु चूँकि वह कर्मातीत हैं और सारी मनुष्य-सृष्टि के परमपिता हैं, अत: वे किसी मनुष्य के बीज से अथवा किसी माता के गर्भ से जन्म नहीं लेते और कोई कर्म-जन्य शरीर नहीं लेते बल्कि वह

परकाय प्रवेश करते हैं। वह एक साधारण, अनुभवी एवं वृद्ध मनुष्य के तन में अवतरित होते है अर्थात् परमधाम से आकर उसकी काया में प्रवेश करते हैं तथा उसका नाम 'प्रजापिता ब्रह्मा' रखते हैं। उसके तन में अवतरित होकर वह मनुष्यमात्र को पिता, शिक्षक, गुरु रूप से प्रेम और ज्ञान तथा स्नेह और सहायता देते हैं और उन्हें पतित से पावन तथा भोगी से योगी बनाते हैं। स्पष्ट है कि मनुष्य-सृष्टि को सुख-शान्ति सम्पन्न बनाने का यह कार्य अथवा मनुष्य को पतित से पावन बनाने का यह कार्य अन्य किसी विधि से नहीं हो सकता, न ही अन्य कोई अमानुषी रूप धारण करने से हो सकता है। अत: प्रजापिता ब्रह्मा के मानुषी रूप में ही परमात्मा जगतपिता जगद्-गुरु के नाम से विख्यात हैं।

अवतार-सम्बन्धी कथाओं पर विचार

ऊपर, परमात्मा के अवतरण का जो उद्देश्य (मनुष्य मात्र को स्थायी पवित्रता, सुख-शान्ति देना) समझाया गया है तथा जिस रूप (मनुष्य रूप) में उनका अवतरण बताया गया है, उनके अवतरण की रीति (परकाय प्रवेश) का जो उल्लेख किया गया है तथा उनकी कार्य-विधि (ज्ञान और सहज योग द्वारा मनुष्यों के संस्कारों को पावन बनाने) का परिचय दिया गया है, उसको ध्यान में रखने से हम यह विचार करके किसी निर्णय पर पहुँच सकते हैं कि पुराणों में अवतरण-सम्बन्धी जो कथाएँ हैं, क्या वह ठीक हो सकती हैं या उनमें बताई गई बातों का होना असम्भव ही है।

उदाहरण के तौर पर श्रीमद्भागवत् में वर्णित, वाराह, कच्छ (कूर्म अथवा कच्छप), मच्छ (मत्स्य), नृसिंह इत्यादि रूपों पर विचार कीजिए। वाराह रूप के बारे में श्रीमद्भागवत् में लिखा है कि 'सम्पूर्ण पृथ्वी प्रलय के महाजल में मग्न थी। ब्रह्मा जी सोच ही रहे थे कि इसे कैसे बाहर निकालूँ। वह यह विचार करने लगे कि एक बार तो मैंने इस सारे जल को पी लिया था परन्तु आदि काल में मुझ द्वारा रचे हुए जल में अब यह पृथ्वी रसातल को चली गई है। ब्रह्माजी इस विचार में मग्न ही थे कि सहसा उनकी नाक के छिद्र से एक अँगूठे के बराबर वाराह का बच्चा निकल पड़ा। वह बालक ब्रह्माजी के देखते-देखते ही हाथी के बराबर हो गया। वह बड़ी जोर से गर्जना करने लगा। उसको देख कर ब्रह्माजी तथा अन्य ऋषि अपने मन में तर्क-वितर्क करने लगे कि यह कौन है! अन्त में उन्हें निश्चय हुआ कि स्वयं भगवान ने ही यह रूप धारण किया है। उन्होंने वाराह की स्तुति की। अपनी स्तुति से प्रसन्न होकर वाराह जी गर्दन के बाल फटकार, पूँछ उठा, बड़े जोर से गर्जना करके महाप्रलय के जल में कूद पड़े ओर सूंघ-सूंघकर पृथ्वी को ढूँढने लगे। वह अपने खुरों से जल को चीरते-चीरते समुद्र के नीचे अन्त तक जा पहुँचे। वहाँ उन्होंने पृथ्वी को देखा। वाराह जी ने अपने बाहर निकले हुए तीक्ष्ण दाँतों पर पृथ्वी को उठा लिया और ऊपर की ओर आने लगे। उसी समय जल के भीतर ही हिरण्याक्ष नामक राक्षस हाथ में गदा लेकर वाराह के सम्मुख आया और उसने उनकी राह रोक ली। इससे भगवान बहुत कुपित हुए। दोनों में गदाओं से बहुत

भारी युद्ध हुआ। महाबली हिरण्याक्ष के प्रहार से भगवान की गदा हाथ से छूट गई। भगवान को शस्त्रहीन देखकर उसने भगवान पर फिर प्रहार नहीं किया। भगवान ने उस दानव के युद्ध-धर्म को माना और उस समय अपने स्वदर्शन चक्र का स्मरण किया। तब हिरण्याक्ष ने वाराह पर गदा से, त्रिशूल से और घूसों से भी प्रहार किया। भगवान ने क्रोधित होकर उसकी कान की जड़ में एक करारा तमाचा मारा कि उस तमाचे से हिरण्याक्ष चक्कर खाकर गिर पड़ा और मर गया। तब भगवान पृथ्वी को अपने दाँतों पर उठाये जल के बाहर निकले....'' आदि-आदि।

ऊपर की कथा पर ज़रा विचार कीजिए कि क्या इस प्रकार नाक के छिद्र से वाराह की उत्पत्ति हो सकती है और वह कुछ ही क्षण में इतनी बड़ी काया वाला हो सकता है और क्या ब्रह्मा ऋषि इतने सारे जल को पी सकता है? परमात्मा का नाक से जन्म मानना और वह भी वाराह-जैसी निकृष्ट योनि में – क्या यह मनुष्य की अज्ञानता नहीं? फिर, सारी पृथ्वी का जल में डूब जाना, वाराह का सूँघ-सूँघ कर पृथ्वी को ढूँढना, अपनी एक दाँ पर उसे उठाकर ले आना और उसी चार टाँगों वाले वाराह रूप से, अपनी आगे की टाँग में गदा धारण करके हिरण्याक्ष से युद्ध करना, गदा को अपने हाथ से गँवा बैठना, फिर क्रोधान्वित होकर हिरण्याक्ष को थप्पड़ लगाना, यह लड़ाई-झगड़े और विकारों आदि की सारी बातें कैसी अजीब हैं! क्या यही है तरीका भगवान के अवतरित होने का और कार्य करने का? हमने ऊपर, भगवान के अवतरण के जो उद्देश्य बताये हैं, उन में से भला कौन-

सा उद्देश्य वाराह रूप द्वारा पूरा हुआ? पुनश्च, आप सोचिए कि पृथ्वी जल-मग्न थी तो भला ब्रह्मा और अन्य ऋषि कहाँ खड़े थे और जल में कूदने से पहले वाराह स्वयं कहाँ खड़ा था? इसका कोई उत्तर आपको नहीं मिलेगा। इस प्रकार, आप सारी बात पर विचार करने से इसी निर्णय पर पहुँचेंगे कि ये सभी बातें मनुष्यों द्वारा कल्पित अथवा मन-गढ़ंत बातें हैं। इनमें तथ्य कुछ भी नहीं है, बल्कि इन द्वारा भगवान की ग्लानि की गई है। उसे क्रोधी, लड़ाका और तुच्छ योनियों में भी जन्म लेने वाला बताया गया है और ऐसी अमान्य बातों द्वारा लोगों को नास्तिक अथवा अवतारवाद का विरोधी बना दिया गया है।

इसी प्रकार, अन्य अवतारों के बारे में जो कथाएँ हैं, वे भी विवेक द्वारा पुष्ट नहीं होतीं। उदाहरण के तौर पर नृसिंह अवतार के बारे में लिखा है कि हिरण्यकशिपु ने खम्भे को घूँसा मारा तो उसमें से नृसिंह के रूप में भगवान ने अवतार लिया और उसने झपट कर हिरण्यकशिपु को उठा लिया और अपनी जंघाओं पर रखकर उसका हृदय फाड़ डाला। कूर्म अथवा कछुए के रूप में अवतार के बारे में लिखा है कि जब समुद्र-मंथन हुआ तो भगवान ने कछुए का रूप धारण किया और उनकी पीठ पर मन्दराचल पर्वत टिकाकर समुद्र-मंथन किया गया। हँस अवतार के बारे में कहा गया है कि जब ब्रह्मा जी सनत्कुमार आदि को परमहंस योग का स्पष्टीकरण न दे सके तो भगवान ने हँस के रूप में अवतरित होकर उन्हें वह योग सिखाया। मत्स्य रूप के बारे में लिखा है कि जब राजा सत्यव्रत पानी की अंजली दे रहे थे तो उनकी

अंजली में एक मछली आ गई और वह बढ़ते-बढ़ते इतनी बढ़ गई कि प्रलय-काल में सारी पृथ्वी को खींचकर चलती रही।'

इन कथाओं द्वारा परमात्मा की ग्लानि और लोगों में नास्तिकता का भाव

इन तथा अन्य अवतार-सम्बन्धी कथाओं पर विचार करने पर आप मानेंगे कि ये सभी कथाएँ भगवान के स्वरूप, स्वभाव, अवतार-विधि, कार्य-विधि, उद्देश्य आदि के विरुद्ध हैं और विवेक-सिद्ध भी नहीं हैं क्योंकि न तो समुद्र के मंथन से अमृत निकल सकता है, न ही हँस के रूप में ज्ञान दिया जा सकता है, बल्कि ज्ञान तो मनुष्य-तन धारण करके ही दिया जा सकता है और वास्तव में ज्ञान-मंथन से, न कि समुद्र-मंथन से ही, मनुष्य को अमृत की प्राप्ति होती है जिस द्वारा कि वह अमर पद पा लेता है। हँस और मत्स्य के रूप में मनुष्यों से बोलना भला सम्भव कैसे हो सकता है? पुनश्च, नृसिंह रूप में अवतार लेने की आवश्यकता भी नहीं है क्योंकि भगवान तो वास्तव में शंकर द्वारा प्रेर कर सारी आसुरी सृष्टि का महाविनाश कराते हैं। भगवान किसी खम्भे (स्तम्भ) को फाड़कर या नासिका में से या जल के नीचे से प्रकट होकर अवतार नहीं लेते बल्कि वह तो परमधाम से अवतरित होकर पर-काय प्रवेश करते हैं।

पुनश्च, नृसिंह, वाराह, हंस, कूर्म आदि स्थूल रूपों में जन्म तो माता के गर्भ से जन्म लिए बिना हो ही नहीं सकता और भगवान तो अयोनिज है; वह कछुए, मत्स्य, हंस आदि पशु-पक्षियों के रूप में

जन्म ही नहीं लेते। परमात्मा का जन्म, जो कि प्रकृति को वश करके और असाधारण रूप से माना गया है, वह परकाय प्रवेश ही है। परन्तु **''असाधारण''**, **''अलौकिक''**, **''प्रकृति को वश करके''** – इन तथा अन्यान्य ऐसे शब्दों का वास्तविक अर्थ न जानने के कारण ही लोग वाराह, नृसिंह आदि असाधारण रूपों में परमात्मा का जन्म मानते चले आये हैं जो कि वास्तव में हो ही नहीं सकता।

एक ही समय में अनेक अवतार मानने की भूल

सभी लोग मानते हैं कि भगवान अथवा परमात्मा एक है। अब विचार की बात है कि एक ही परमात्मा का अवतरण भी तो एक ही होना चाहिए। परन्तु श्रीमद्भागवत् आदि ग्रन्थों में अवतार-सम्बन्धी जो कथाएँ हैं, उनमें एक ही समय में परमात्मा के अनेक अवतार दिखाये गए हैं। उदाहरण के तौर पर, परशुराम और रामचन्द्र, दोनों को अवतार माना गया है और दोनों को एक ही समय हुआ बताया गया है, यहाँ तक कि सीता-स्वयंवर के समय दोनों को झगड़ा करते अथवा तू-तू, मैं-मैं करते बताया है। इसी प्रकार, लिखा है कि सनक, सनन्दन, सनत्कुमार आदि सभी ब्रह्माजी के पुत्र थे और ये सभी भगवान के अवतार थे जो कि एक ही समय में हुए और फिर इनके सामने भगवान हँस के रूप में प्रकट हुए क्योंकि ये परमहँस योग सीखना चाहते थे। इसका भी यही अर्थ हुआ कि एक समय में अनेक अवतार हुए। समुद्र-मंथन की कथा में भी कछुए के अतिरिक्त, धनवन्तरी तथा मोहिनी रूप को भी भगवान के अवतारों के रूप में वर्णन किया है। इसी

तरह, कृष्ण के समकालीन बलराम तथा व्यास भी भगवान के अवतार ही माने जाते हैं। अब आप ज़रा सोचिए कि इधर उन्हें भगवान के अवतार मानना और साथ ही उनकी योग सीखने की इच्छा को देखकर भगवान का हँस के रूप में उनके सामने प्रकट होना – यह कैसी विडम्बना है? जबकि वे स्वयं ही भगवान के अवतार थे तो फिर भगवान को हँस रूप में उनके सामने अवतरित क्यों होना पड़ा? इसी प्रकार, लोग एक ओर तो व्यास को भगवान का अवतार मानते हैं और दूसरी ओर व्यास, श्रीकृष्ण को भगवान का अवतार मानता है – यह भी कैसी अजीब बात है!

वास्तविकता क्या है?

अत: इन सभी कथाओं से स्पष्ट है कि भगवान के स्वरूप, उनके अवतरण की रीति, अवतरण के उद्देश्य तथा कार्य-विधि को न जानने के कारण ही ये सभी दन्त-कथाएँ गढ़ी गई हैं। वरना, एक ही भगवान के दो या अधिक समकालीन अवतारों को सम्भव मानना और फिर उनमें ''तू-तू, मैं-मैं'' होना, परशुराम द्वारा अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिए २१ बार अपने परशु (कुल्हाड़े) द्वारा पृथ्वी के सारे क्षत्रियों का नाश करना, ऐसी बे-तुकी बातें कोई न लिखता, न सुनता, न मानता।

आज कूर्म, मत्स्य, वाराह इत्यादि रूपों के न तो अनेकानेक मन्दिर हैं, न ही उन रूपों में भगवान को प्राय: लोग याद करते हैं, न ही उन रूपों में भगवान के अवतरण के लिए कोई प्रार्थना ही करता

या उसे भोग लगाता है। इससे सिद्ध है कि लोग अपने मन की गहराई में परमात्मा का इन योनियों में अवतरण नहीं मानते और इस प्रकार के कार्यों की भी आशा नहीं करते। पुनश्च, परमात्मा का कोई पिता नहीं होता जैसा कि परशुराम का था, जिसके बारे में कहा जाता है कि उसने पिता की मृत्यु के बदले में २१ बार क्षत्रियों का नाश किया या जैसे श्रीराम का पिता था, जिसके बारे में कहा जाता है कि पिता द्वारा केकैयी को वचन दिया होने के कारण राम को वनवास भोगना पड़ा। परमात्मा एक है, वह सबका पिता है, **उसका कोई पिता नहीं होता वह न वनवास भोगता है, न ही जरा आदि के तीर लगने से शरीर छोड़ता है। वह न खम्भा फ़ाड़कर नृसिंह की तरह स्थूल काया धारण करता है, न ही किसी की नासिका के छिद्र से वाराह रूप धारण करता है। वह न कूर्म बनता है, न ही वामन बनकर किसी से छल करता है। वह न किसी को कुल्हाड़े से मारता है, न तीर या चक्र से किसी की हत्या करता है। वह न पृथ्वी को सूँघ-सूँघ कर ढूँढता है, न ही नृसिंह की तरह किसी असुर का हृदय फाड़कर अपने हाथ खून से रंगता है। वह न ब्रह्मा है, न विष्णु है और न शंकर है बल्कि, वह तो इन तीनों का रचयिता, ज्योतिस्वरूप (ज्योतिबिन्दु) है और कल्याणकारी होने के कारण 'शिव' नाम वाला, अकाय अथवा अव्यक्त है। वह किसी समुद्र-मंथन द्वारा अमृत नहीं देता बल्कि ब्रह्मा के तन में परकाय प्रवेश करके ज्ञानामृत देता है।** वह एक-दो असुरों का नाश नहीं करता, न ही हिरण्याक्ष आदि जैसे कोई असुर हो सकते हैं जो कि सारी पृथ्वी को लेकर रसातल में चले जाएँ बल्कि जब सारी सृष्टि के मनुष्य आसुरी स्वभाव वाले हो जाते हैं और विषय-

विकारों में डूब जाते हैं और जब उनके विपरीत-बुद्धि होने के कारण विनाशकाल निकट आ पहुँचता है, तब परमात्मा महादेव शंकर द्वारा प्रेरकर सृष्टि का महाविनाश कराते हैं। परमात्मा राम और कृष्ण के रूप में अवतार नहीं लेते बल्कि अवतरित होकर मनुष्य को ज्ञान और योग द्वारा श्रीराम और श्रीकृष्ण के जैसा दैवी स्वभाव वाला बनाते हैं जो कि वास्तव में पूर्ण अहिंसक थे परन्तु आज ग्रन्थों में उनका उल्लेख तीरों तथा चक्रादि द्वारा हिंसा करने वालों के रूप में मिलता है। परमात्मा का अवतरण एक युग में एक बार या कई बार नहीं होता बल्कि चारों युगों के अन्त में एक बार, धर्म की अत्यन्त ग्लानि के समय प्रजापिता ब्रह्मा के रूप में होता है ताकि ईश्वरीय ज्ञान और योग द्वारा धर्म, सदाचार, अहिंसा, सत्त्वगुण, दैवी मर्यादा आदि की पुनर्स्थापना हो और कलियुग का अन्त होकर सतयुग की शुरूआत हो।

क्या परमात्मा का अवतरण हर युग में होता है?

सर्वशास्त्र शिरोमणि श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान के ये महावाक्य

हैं कि-'जब-जब धर्म की ग्लानि होती है, तब-तब मैं अधर्म के विनाश के लिए तथा सत्य धर्म की पुन: स्थापना के लिए व्यक्त होता हूँ।' गीता के इन वाक्यों में जो 'युगे-युगे' और 'यदा-यदा' शब्द आए हैं, इनका लोग यह अर्थ लेते हैं कि परमपिता परमात्मा का अवतरण हर युग में होता है अथवा कि परमात्मा के अनेक अवतार होते हैं। उनके इस मन्तव्य का एक कारण यह भी है कि श्रीमद्भागवत् में भगवान के चौबीस अवतारों का वर्णन भी है। इसके अतिरिक्त, गीता में यह भी वाक्य हैं कि- 'हे वत्स, पहले भी सृष्टि के आदि में यह योग मैंने सिखाया था। परन्तु अब, पुन: प्राय: लोप हो गया है। अत: आज लोगों की यह धारणा बन चुकीं हैं कि परमात्मा के अनेक अवतार हुए हैं। अब हम ईश्वरीय ज्ञान की दृष्टि से विचार करके देखेंगे कि 'यदा-यदा' और 'युगे-युगे' का क्या यही अर्थ है जो प्राय: लिया जाता है और क्या परमात्मा के अनेक अवतरण हुए हैं?

सृष्टि-चक्र अथवा युग-चौकरी को समझने से आप मानेंगे कि सतयुग और त्रेतायुग में तो भगवान के अवतरण की आवश्यकता ही नहीं है क्योंकि इन युगों में तो धर्म, पूर्णरूपेण स्थित है और कि भगवान का अवतरण् तो केवल कलियुग ही के अन्त में हो सकता है, जिसके निम्नलिखित कुछ कारण हैं–

(१) कलियुग के अन्त में ही धर्म की अत्यन्त ग्लानि होती है और मनुष्य आसुरी सम्पत्ति वाले हो गये होते हैं जैसे कि गीता में कहा गया है।

(२) कलियुग के अन्त में ही ज्ञान और योग प्राय: लोप हो गया होता है, जिसे फिर सिखाने के लिए भगवान के अवतरण की आवश्यकता होती है।

(३) कलियुग के बाद ही सतयुग की शुरूआत होनी होती है और उस सुख-काल में ही मनुष्यात्माओं को सुख अथवा जीवन-मुक्ति प्राप्त हो सकती है। कलियुग के अन्त में ही अधर्म वाली तथा आसुरी सम्पत्ति वाली सृष्टि का महाविनाश हो सकता है तथा दैवी सम्पत्ति वाली तथा सत् धर्म वाली सतयुगी सृष्टि की पुन: स्थापना हो सकती है, जिसके लिए भगवान अवतरित होते हैं और तब ही सभी मनुष्यात्माओं को मुक्ति तथा जीवन्मुक्ति भी मिल सकती है। अत: भगवान के ये जो महावाक्य हैं कि मैं 'महाकाल हूँ, लोक के बढ़ जाने पर सृष्टि के महाविनाश के लिए प्रकट हुआ हूँ, देख, सभी मनुष्यात्माएँ पतंगों की तरह मेरी ओर आ रही हैं आदि-आदि, ये सभी कलियुग के अन्त में ही सत्य हो सकते हैं।

(४) पुनश्च, भगवान ने यह जो कहा है कि - 'तू सभी धर्मों को छोड़कर एक मेरी शरण ले,' ये महावाक्य भी कलियुग के अन्त के समय की परिस्थितियों पर ठीक चरितार्थ होते हैं क्योंकि तब ही सभी धर्म अथवा मत-सम्प्रदाय पृथ्वी पर उपस्थित होते हैं।

(५) परमात्मा, जो तीनों कालों अथवा सृष्टि के आदि, मध्य और अन्त और पुनरावृत्ति का ज्ञान देता है, वह भी कलियुग के अन्त में ही समझा जा सकता है क्योंकि तब ही चारों युग बीत चुके होते

हैं और अब महाविनाश के बाद उनकी पुनरावृत्ति होती है। पुनश्च, ज्ञान को पूरी तरह से समझा भी तभी जा सकता है जब कि उसका विरोधी 'अज्ञान' अथवा मिथ्या ज्ञान भी पूर्ण विस्तार को प्राप्त हो। अत: इस दृष्टिकोण से भी परमात्मा को कलियुग के अन्त ही में अवतरित होकर ईश्वरीय ज्ञान तथा योग की शिक्षा देनी चाहिए क्योंकि तब ही अज्ञान और मिथ्या ज्ञान अपनी पूर्ण पराकाष्ठा पर होता है और तब ही वास्तविक ज्ञान भी उसकी तुलना अथवा भेंट में ठीक प्रकार समझा जा सकता है।

(६) इसके अतिरिक्त, परमात्मा तो सभी आत्माओं के परमपिता हैं; अत: उन द्वारा तो सभी मनुष्यात्माओं को लाभ होना चाहिए। ऐसा समय जबकि लगभग सभी आत्माएँ पृथ्वी पर आ चुकी होती हैं, कलियुग का अन्त ही होता है, तभी सभी मनुष्यात्माएँ यहाँ साकार होती हैं। अत: तब ही परमपिता परमात्मा एक बार अवतरित होकर ईश्वरीय ज्ञान और योग की शिक्षा देते हैं।

(७) कलियुग से पहले न तो सभी आत्माएँ सृष्टि-मंच पर आ चुकी हैं, न अज्ञान ही पूरी तरह फैला हुआ होता है, न आसूरी सम्प्रदाय की वृद्धि हुई होती है, न सभी धर्म ही पृथ्वी-मंच पर प्रकट हुए होते हैं कि भगवान 'सर्व धर्मानि परित्यज' की बात कह सकें, न ही तब आदि-मध्य-अन्त के ज्ञान को समझा जा सकता है और न ही उसकी प्रालब्ध अर्थात् सतोप्रधान, सतयुगी देवपद प्राप्त किया जा सकता है। अत: इससे पूर्व, परमात्मा का अवतरण हो ही नहीं सकता।

परमात्मा तो मनुष्य-सृष्टि के बीज हैं और बीज तभी प्रकट होता है जब कोई नई रचना करनी हो। अत: जब कि रचना का कर्त्तव्य कलियुग के अन्त के बाद अर्थात् सतयुग आने पर ही होता है, तो समझना चाहिए कि परमपिता परमात्मा के अवतरण का समय भी वही है। यदि परमात्मा अन्य किसी युग में आ जायें तब तो सतयुग स्थापन हो जायेगा और जो आत्माएँ तथा जो धर्म द्वापर या कलियुग में अन्त तक आते हैं, वे तो सृष्टि-मंच पर आ ही नहीं सकेंगे।

(८) यह बात भी प्रसिद्ध है कि 'परमात्मा ब्रह्म-मुहूर्त्त अथवा अमृतवेले में सृष्टि का भ्रमण करते हैं।' वास्तव में कलियुग का अन्तिम समय, जबकि सभी आत्माओं को सृष्टि के महाविनाश के बाद ब्रह्म-मुहूर्त्त है। वही अमृतवेला भी है क्योंकि तभी परमपिता परमात्मा ज्ञानामृत पिलाते हैं। अत: वास्तव में कलियुग के अन्त और सतयुग के आदि के संगम ही का समय, जिसे 'पुरुषोत्तम युग,' 'संगम युग' अथवा 'संधि काल' भी कहा जाता है, परमपिता परमात्मा त्रिमूर्ति शिव के अवतरण का समय है, यह बात अन्य अनेक युक्तियों से भी सिद्ध की जा सकती है।

'युगे-युगे' और 'यदा यदा' का अर्थ

उपर्युक्त से स्पष्ट है कि परमपिता परमात्मा के अनेक अवतार न होते हैं, न हो सकते हैं और न होने की आवश्यकता है। यह सृष्टि, सुख-दु:ख का अनादि खेल है और इसमें सभी आत्माएँ पहले सुख भोगती हैं और अन्त में ही उनकी 'आइरन एज' अर्थात् तमोप्रधान

अवस्था होती है। तभी परमपिता परमात्मा के अवतरण की आवश्यकता होती है क्योंकि उनके सिवा अन्य कोई भी सभी आत्माओं को पतित से पावन, दु:खी से सुखी या तमोप्रधान (Iron-Aged) से सतोप्रधान (Golden-Aged) नहीं बना सकते हैं।

अत: दिव्य विवेक से पुष्ट होने वाली इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए मानना होगा कि वास्तव में 'युगे-युगे' का अर्थ कलियुग और सतयुग नाम के दो युगों का संगम है। उस युग में ही परमपिता परमात्मा का अवतरण होता है और हर चतुर्युगी के बाद जब पुन: कलियुग का अन्त आता है और जब पुन: धर्म की ग्लानि होती है और आसुरी सम्प्रदाय वृद्धि को प्राप्त होता है, तब पुन: स्थापना के लिए अपना कर्त्तव्य करना होता है। अत: 'जब-जब' अथवा 'यदा-यदा' का अर्थ यह नहीं है कि हर युग में परमात्मा आते हैं। बल्कि 'जब-जब धर्म की ग्लानि होती है अर्थात् जब-जब कलियुग का अन्त और नई सतयुगी सृष्टि के आदि का संगम आता है (क्योंकि धर्म की अत्यन्त ग्लानि तभी होती है), तभी-तभी परमात्मा आते हैं।'

इसीलिए भगवान के यह भी महावाक्य हैं कि 'पहले भी सृष्टि के आदि में यह ज्ञान और योग मैंने सिखाया था' क्योंकि उसी संगम समय' को ही पुरानी सृष्टि के अन्त और नई सृष्टि के आदि का समय कह सकते हैं।

इन सभी रहस्यों को समझने से यह निर्णय होगा कि परमपिता परमात्मा शिव का अवतरण सारे कल्प में एक ही बार, कलियुग के

अन्त और सतयुग के आरम्भ के संगम युग' में, मानुषी तन में, दिव्य प्रवेश करके, ईश्वरीय ज्ञान और योग की शिक्षा देने, कलियुगी आसुरी सम्प्रदाओं का महाविनाश कराने तथा सतयुगी देव सृष्टि की पुन: स्थापना कराने के लिए होता है।

परमात्मा के अवतार की कलाएँ

परमात्मा के अनेक अवतार मान लेने पर लोग किसी अवतार को 'अंश अवतार' और किसी को 'पूर्ण अवतार' मानते हैं। परन्तु वास्तव में यह मान्यता भी ठीक नहीं है। परमात्मा एक है और अखण्ड है। उसके अंश नहीं होते, न ही आंशिक अवतरण होते हैं। उसके अवतार की न सोलह कलाएँ होती हैं, न चौदह बल्कि चौदह और सोलह कला पवित्रता वाले तो देवता कहलाते हैं। परमात्मा तो अनन्त कलाओं वाले हैं, सदा-सम्पूर्ण हैं। जो चौदह कला (Degrees) पवित्र हैं, वे चन्द्रवंशी देवता हैं और जो सोलह कला पवित्र एवं दिव्य हैं उन्हें 'सूर्यवंशी देवता' कहना उचित है। उन्हें 'भगवान' या 'परमात्मा' नहीं कहा जा सकता, न ही उन्हें भगवान का अवतार माना जा सकता है। हाँ, उन्हें भगवान के अवतरण का फल माना जा सकता है क्योंकि उन्होंने ये कलाएँ भगवान के अवतरित होने पर, उनके ईश्वरीय ज्ञान और योग द्वारा ही प्राप्त की होती हैं।

इन सभी बातों को ध्यान में रखने से भगवान के अवतरण की बात समझ में ठीक तरह आ सकेगी। वरना भगवान को सर्वव्यापी मानने से, उसे विष्णु मानने से या कछुए, मत्स्य, वाराह आदि रूपों में उसका

अवतार मानना तो सत्यता से दूर ही होना है क्योंकि सर्वव्यापक का अवतरण होने का तो प्रश्न ही नहीं उठता और विष्णु को तो 'देवता' ही कहा जा सकता है न कि 'परमात्मा' और वाराह इत्यादि के जो अवतरण, उद्देश्य तथा कार्य-विधि बताये गए हैं, वैसे तो विवेक-संगत और सम्भव भी नहीं हैं और अनुभव के भी विरुद्ध हैं। वर्तमान समय ज्योति-स्वरूप परमपिता परमात्मा प्रजापिता ब्रह्मा के मानुषी तन में प्रवेश करके जो अनुभव करा रहे हैं तथा ईश्वरीय ज्ञान और योग की शिक्षा दे रहे हैं, उसके द्वारा हम भली-भाँति समझते हैं कि परमातमा का अवतरण परकाय प्रवेश ही का नाम है और उनका यह अवतरण मनुष्य मात्र की गति या सद्गति करने के लिए होता है, न कि पृथ्वी से जल को निकालने या क्षत्रियों से रहित करने या किन्हीं को छल कर उनसे लोक-परलोक लेने के लिए। इस बात को जान कर अब हर-एक मनुष्य अपने लिए स्वयं निर्णय करे कि सत्य क्या है?

हमने यह रहस्य एक अन्य पुस्तक में स्पष्ट किया है कि ज्योति-बिन्दु परमपिता परमात्मा शिव ने गीता-ज्ञान श्री कृष्ण रूप द्वारा नहीं दिया था बल्कि प्रजापिता ब्रह्मा रूप द्वारा दिया। ब्रह्मा ही ने अपने अगले जन्म में श्री कृष्ण के मनोहर रूप में जन्म लिया था। अत: गीता श्री कृष्ण की भी माता है और भगवान श्री कृष्ण के भी परमपिता हैं और ज्योतिस्वरूप हैं। गीता के महावाक्यों पर श्री कृष्ण का नाम अंकित करने की भूल कैसे हुई, इस विषय पर प्रजापिता ब्रह्मा-कुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय द्वारा प्रकाशित पुस्तक पढ़िए। (परन्तु यहाँ यह समझ

लेना जरूरी है कि श्री कृष्ण के पूर्व-जन्म में अर्थात् उनके ब्रह्मा (नर) रूप में उनके तन में भगवान (ज्योति-बिन्दु शिव) अवतरित हुए थे)। श्री कृष्ण को अवतार नहीं बल्कि 'सम्पूर्ण एवं सर्वश्रेष्ठ देवता' कहा जा सकता है जिन्होंने कि पूर्व जन्म में भगवान से ज्ञान एवं योग की शिक्षा लेकर सोलह कला दिव्य गुण धारण किए। श्रीराम ने भी अपने पूर्व-जन्म में रामेश्वर (शिव) से ब्रह्मा द्वारा ईश्वरीय ज्ञान तथा योग की चौदह कलाएँ धारण कीं।

स्वयं अवतरित क्यों

एक बार अकबर ने बीरबल से कहा-'हम कैसे मानें कि परमात्मा को स्वयं अवतरित होना पड़ता है?' बीरबल बोले-'तीन दिनों के बाद बताऊँगा।'

तीसरे दिन बीरबल ने अकबर के एक लड़के का बुत नदी में ज्यों ही धकेला, बादशाह नदी में कूद पड़े।

बीरबल बोले – 'महाराज, इतने नौकरों-चाकरों के होते हुए इसे बचाने आप स्वयं कूदे? महाराज, आत्मजका नाता ही एकसा होता है। इसी प्रकार, जब मनुष्यात्मायें विषय विकारों में डूबने वाली होती हैं तब करुणानिधि परमपिता परमात्मा किसी सन्देश वाहक को न भेज, स्वयं अवतरित होते हैं।

पराये तन में परमात्मा का प्रवेश और उनका साधारण वेश

:— क्या परमात्मा कोई चमत्कार दिखाते है? :—

कलियुग के अन्त में जब विश्व-शान्ति की समस्या, जन-संख्या में वृद्धि की समस्या, रोजगार और भ्रष्टाचार आदि-आदि समस्याएँ बहुत उग्र रूप धारण कर जाती हैं और जब घर-घर में कलह मच जाता है तथा मनुष्य आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक भौगोलिक एवं भाषा-सम्बन्धी मत-भेदों के कारण परस्पर प्रीति खो बैठते हैं, तब परमपिता परमात्मा को परमधाम छोड़कर, उस लोक में आना पड़ता है क्योंकि वह ही बिगड़ी को बनाने वाले, भूले-भटकों को तथा नयन-हीनों को राह दिखाने वाले और विश्व में शान्ति तथा सुख की वर्षा करने वाले हैं। जब सभी प्राणियों में से उच्च प्राणी अर्थात् मनुष्य, अपने धर्म-कर्म से गिर जाता है तो उसे पुनः उसके स्वरूप की स्मृति दिलाने के लिए, उसे उसके जीवन का लक्ष्य बताने के लिए, उसे लोक, परलोक का परिचय कराके श्रेष्ठ कर्मों वाला तथा योगी बनाने के लिए, परमपिता परमात्मा को शान्तिधाम को छोड़कर इस कलहयुगी लोक में आना पड़ता है और ज्ञान तथा योग सिखाने के लिए एक मनुष्य-तन का आधार लेना पड़ता है।

परन्तु चूँकि परमात्मा कर्मातीत हैं और जन्म-मरण से रहित माने गए हैं, इसलिए उनका कोई लौकिक जन्म नहीं होता। वे प्रकृति के वश होकर अथवा कर्मों के बन्धन में आकर अथवा किन्हीं माता-पिता

की सन्तान होकर जन्म नहीं लेते। वे कोई अपना शरीर नहीं लेते बल्कि वह प्रकृति को वश करके एक साधारण एवं वृद्ध तन द्वारा ईश्वरीय ज्ञान और योग की शिक्षा देते हैं। भारत में कई आरतियों में परमात्मा के वृद्ध-तन में अवतरित होने का गायन है। उन आरतियों द्वारा संकेत मिलता है कि परमात्मा ने पहले भी कभी एक बूढ़े ब्राह्मण के तन में प्रवेश करके भारत को कंचन महलों वाला देश बनाया था। सत्यनारायण की कथा द्वारा निश्चय ही यह संकेत मिलता है कि परमात्मा पहले भी वृद्ध एवं साधारण मनुष्य तन में अवतरित हुए थे, जिस कारण यहाँ के कई लोग उन्हें पहचान न सके थे। आज तक भी यहाँ के लोग प्राय: गद्य या पद्य में कहा करते हैं कि, 'बड़े प्यार से मिलना सबसे, न जाने किस वेश में आ जाएँ भगवान रे! श्रीमद्भगवद्गीता में भी ऐसा ही उल्लेख है कि जब भगवान का अवतरण होता है तो कोटि-कोटि मनुष्यों में से कोई विरला ही मनुष्य उन्हें पहचान पाता है और साधारण तन को देख कर अनेक मूढ़मति लोग उन्हें तुच्छ समझते हैं, उन्हें जन्म-मरण में आने वाला कोई मनुष्य ही मानते हैं।

परमात्मा का अवतरण होने पर लोग उन्हें क्यों नहीं पहचान पाते?

परमात्मा के अवतरण के विषय में ऊपर कही गई बात का विवेक से भी समर्थन होता है। स्पष्ट है कि कलियुग के अन्त में जबकि परमापिता परमात्मा अवतरित होते हैं, मनुष्यों के शरीर कोई दैवी (देवताई), आकर्षक, अति सुन्दर और दिव्य एवं निरोग तथा

सतोप्रधान तो होते नहीं हैं क्योंकि उस युग में तो मनुष्य विकारी और तमोगुणी होते हैं। कलियुग में मनुष्यों का जीवन भी दिव्य और अलौकिक नहीं होता। यह बात हम स्वयं देखते और जानते हैं। अत: परमात्मा जिस मनुष्य के तन में प्रवेश करते हैं, अर्थात् परमात्मा जो नर-वेश लेते हैं, उसके साधारण होने के कारण, लगभग सभी मनुष्य परमात्मा को उस रूप में पहचान नहीं सकते। **देह-अभिमानी होने के कारण, लोग उनके बाहर के दैहिक रूप को ही देखते हैं। उनके पास ज्ञान का वह 'नेत्र' जोकि परमात्मा स्वयं अवतरित होकर देते हैं, तो होता नहीं। अत: आँखों पर माया की पट्टी बंधी होने के कारण, स्वयं को बड़ा बुद्धिमान एवं तार्किक मानने के कारण परन्तु वास्तव में सत्य ज्ञान से रहित और मिथ्या ज्ञान का अभिमानी होने के कारण, उस अव्यक्त एवं परम पवित्र वस्तु (परमात्मा) को देख और पहचान नहीं सकते।**

क्या परमात्मा अवतरित होकर कोई चमत्कार दिखाते हैं?

ऊपर बताये गये कारण का फल यह है कि जब परमपिता परमात्मा अवतरित होते हैं तो कई लोग उनसे दिव्य बुद्धि का पूरी तरह लाभ नहीं उठाते बल्कि वे कहते हैं – 'हम कैसे मानें कि परमपिता परमात्मा अवतरित हुए हैं? यदि परमात्मा ने परकाय प्रवेश किया हैं अथवा नर-वेश लिया है तो वह कोई चमत्कार क्यों नहीं दिखाते? परमात्मा तो एक सेकेण्ड में क्या से क्या कर सकते है, तब भला साधारण मनुष्य-तन में आये हुए परमात्मा कोई ऐसा करिश्मा

अथवा ऐसी करामात क्यों नहीं दिखाते कि जिससे सभी मान जायें कि सचमुच परमात्मा का अवतरण हुआ है? अच्छा, वह किसी मक्खी की टूटी हुई टाँग ही जोड़ कर दिखा दें? वह किसी मरे हुए मनुष्य को जीवित करके दिखा दें? वह किसी रोगी को एकदम निरोगी करके खड़ा कर दें। भाव यह है कि वह कोई तो असम्भव बात सम्भव करके दिखाएँ वरना हम कैसे मानें कि परमात्मा आए हुए हैं? भला वह हमारे मन की बात ही बता दें। परमात्मा के आने से तो चकाचौंध हो जाना चाहिए और चारों तरफ जगमग ज्योति हो जानी चाहिए। अत: हम कुछ चकाचौंध देखें तो मानें कि – हाँ, निस्संदेह परमात्मा आ चुके हैं।' लोगों ने जो रिद्धि-सिद्धि के कुछ खेल, कई हठ-योगियों को करते देखा है, उससे प्रभावित हो कर वे परमात्मा से भी ऐसा ही तक़ाज़ा अथवा ऐसी ही माँग करते हैं।

परन्तु आप विचार कीजिए कि क्या ऊपर लिखे गए प्रश्न युक्ति-युक्त हैं या भ्रान्तियों पर ही आधारित हैं? देखने में तो ये प्रश्न बहुत ठोस है परन्तु वास्तव में क्या ये ढोल का पोल तो नहीं? इन प्रश्नों को सुनते ही पहले तो ऐसे लगता है कि अब परमात्मा की परीक्षा ठीक तरह हो जायेगी परन्तु क्या यह प्रश्न ही तो ग़लत नहीं? परीक्षा-पत्र (Paper) को बनाने वाला पहले स्वयं भी तो योग्य होना चाहिए।

क्या चमत्मार दिखाने की ज़रूरत है?

इन प्रश्नों पर विचार करने पर आप इसी परिणाम पर पहुँचेगें कि जिन मान्यताओं पर ये प्रश्न आधारित हैं, वास्तव में वे मान्यताएँ ही

गलत हैं। उदाहरण के तौर पर, पहले तो यह आशा की गई है कि भगवान कोई करिश्मा अथवा करामात दिखायेंगे। परन्तु, सोचने की बात है कि परमात्मा को क्या पड़ी है कि वे कोई करिश्मा या करामात दिखाएँ? ऋषि-मुनि अथवा हठयोगी जो चमत्कार दिखाते हैं, उसके पीछे उनके मन में या तो यह भाव होता है कि उनका नामाचार, उनकी प्रसिद्धि अथवा ख्याति हो या वे उसे अपनी आजीविका का साधन बनाना चाहते हैं या वे उन सिद्धियों से खुश हो कर अपने मन पर काबू नहीं पा सकते और उनका मन उनका प्रयोग किए बिना मानता नहीं। यदि इनके अतिरिक्त किसी अन्य कारण से, जैसे कि किसी के हित के लिए भी यदि वे कोई चमत्कार दिखाते हैं, तो उससे उनकी तपस्या का बल तो कम होता ही है क्योंकि उनकी तपस्या के प्रालब्ध के रूप में ही तो उनकी चमत्कार दिखाने और यश प्राप्त करने की इच्छा पूरी होती है। परन्तु परमात्मा को न तो यश प्राप्त करने की इच्छा है, न ही अपने लिए आजीविका के साधन की आवश्यकता है। उन्हें न तो किसी तपस्या की प्रालब्ध भोगनी है और न ही लोगों को इस तरीके से प्रभावित करना है। वास्तव में किसी रोगी को निरोगी बनाने का कार्य तो डाक्टर लोग भी करते हैं और किसी के मन की बात तो टेलीपेथी जानने वाले लोग भी बता सकते हैं। परमात्मा की गति-मति और कार्य-प्रणाली तो न्यारी है और उसे तो वही जानते हैं। मनुष्य तो अपने मिथ्या ज्ञान को ज्ञान मानकर और अपनी बुद्धि को श्रेष्ठ मान कर परमात्मा की भी परीक्षा करने चल पड़ता है।

परमात्मा कौन-सा चमत्कार करते हैं?

परमात्मा इस सृष्टि में किसी मरी हुई मक्खी की टाँग जोड़ने नहीं आते। वह किन्ही एक-दो रोगियों का अल्पकाल के लिए रोग हरने भी नहीं आते। बल्कि, वह तो सभी को चिरकाल तक अथवा जन्म-जन्मान्तर तक के लिए निरोगी बनाने और ऐसी श्रेष्ठ प्रालब्ध वाला बनाने आते हैं कि कभी किसी की टाँग टूटे ही नहीं और उसको जोड़ने की आवश्यकता ही न पड़े। परमात्मा तो सारी सृष्टि को सुख-शान्ति से भरपूर करने आते हैं। उसके लिए उनका तरीका यह है कि रोगों का कारण, मृत्यु और दुर्घटनाओं का कारण, जो छः मनोविकार काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार और आलस्य हैं, वह उन्हें ही हरने का उपाय बताते हैं और उसके लिए मार्ग-प्रदर्शना तथा सहयोग देते हैं। उससे मनुष्य काल के पंजे से छूट कर अमर देवता बन जाता है और सभी सुखों तथा सुविधाओं को पा लेता है। जिन विकारों को मनुष्य घर-गृहस्थ में रहते हुए जीत सकना असम्भव मानते हैं उन्हें वह सहज ही समझकर मिटाते हैं। जिन्हें समाज अत्यन्त विकारी, अनपढ़, निर्धन, अल्प-बुद्धि अथवा निकृष्ट मानता है, उनमें परमपिता ज्ञान और योग-बल द्वारा एक नया जीवन लाते हैं, मानो माया द्वारा मरी हुई उन आत्माओं को फिर से जीवित करते हैं, आध्यात्मिक पुरुषार्थ के पथ पर उनकी टूट गई हुई ज्ञान और योग रूपी टाँगों को वह जोड़ देते हैं और उन्हें ज्ञान-प्रकाश से चकाचौंध कर देते हैं। वह उनकी आत्मा के अथवा मन के रोग हर कर, उन्हें शूद्र से पावन, ब्राह्मण अथवा

निरोगी बना देते हैं। वह किसी इह-लौकिक ज्योति से संसार में जगमग नहीं करते बल्कि मनुष्यात्माओं को ज्ञान-प्रकाश देते-देते यहाँ तमोगुण अथवा अज्ञानाधंकार के स्थान पर ज्ञान-उजाला फैला देता है और, इस प्रकार, कलियुग-रूपी 'ब्रह्मा की रात्रि' का अन्त कर सतयुग रूपी 'ब्रह्मा का दिन' लाने में निमित्त बनते हैं। परन्तु स्थूल बुद्धि अथवा लौकिक बुद्धि होने के कारण मनुष्य, परमात्मा को स्थूल तरीकों से जानने और पहचानने की कोशिश करते हैं जो कि वास्तव में ग़लत है।

अत: वे परमात्मा का यह चमत्कार देखने में असमर्थ होते हैं कि परमात्मा जन्म-जन्मान्तर के विकारी संस्कारों वाली अति पतित मनुष्यात्माओं को घर-गृहस्थ में रहते हुए भी काम, क्रोध-जैसे महाबली शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने में समर्थ बनाते हैं। वे यह करिश्मा नहीं देखते कि चौरासी जन्मों की थकी हुई आत्मा उनके ज्ञान-बल और योग-बल के आधार पर उठ कर खड़ी हो जाती है और अपने स्वभाव को एकदम पावन और मधुर बनाने में तथा क्रोधादि की महाज्वाला को शान्त करने में सफल हो जाती है। क्या कलियुगी नरकमय सृष्टि को बदल कर उसे स्वर्गमय, सतयुगी सृष्टि बना देना कोई कम चमत्कार है? क्या इतने थोड़े- से समय में भी सभी समस्याओं को एक ही उपाय से सदा के लिए हल कर देना और रोग, निर्धनता, जनसंख्या में वृद्धि, विकार, दु:खों आदि-आदि का अन्त कर देना कोई कम करामात है?

क्या परमात्मा नियमों में हस्तक्षेप करते हैं?

पुनश्च, सोचने की बात है कि जो करिश्मे अथवा चमत्कार रिद्धि-सिद्धि वाले मनुष्य कर दिखाते हैं, उन्हें परमात्मा क्यों करके दिखाए? वह प्रकृति के नियमों में हस्तक्षेप करके नियमों को भंग करने का निमित्त क्यों बने? यदि वह कोई करिश्मे करके दिखाने लगे, तब तो लोग विकारों पर विजय प्राप्त कराने वाले ज्ञान को भी महत्त्व न दे कर परमात्मा से यही आग्रह करने लगेंगे कि वह उन्हें कोई रिद्धि-सिद्ध प्राप्त करने की ही युक्ति-मात्र बताये और कि ज्ञान-योग में उन्हें कोई रुचि नहीं है।

इसके अतिरिक्त, यदि सभी विकारी मनुष्य कोई चमत्कारी कार्य देखें और देखने के कारण सभी इस बात पर समान रूप में निश्चय कर लें कि परमात्मा अवतरित हुए हैं तो सभी जीवन्मुक्ति अथवा देव-पद की प्राप्ति के लिए एक-समान ही पुरुषार्थ करने लगेंगे। परन्तु ऐसा तो होना ही नहीं है क्योंकि यह सृष्टि ही विविधता (Variety) का खेल अथवा नाना-प्रकार के ऐक्टरों का नाटक है जिसमें कि सभी आत्माओं रूपी ऐक्टरों को भिन्न-भिन्न ही पार्ट बजाना है अर्थात् भिन्न-भिन्न ही कर्म करने हैं और उनके अनुसार भिन्न-भिन्न ही प्रालब्ध भोगनी है और इसलिए ऐसे कहें कि सभी मनुष्यात्माओं ने परमात्मा को पहचानना भी अपने ही पुरुषार्थ, अपने ही बुद्धियोग बल, अपने ही चाल-चलन तथा संस्कारों के अनुसार है। अत: साधारण नर-वेश लेकर, गुप्त रीति से सतयुगी सृष्टि की पुन:स्थापना का कार्य करना बड़ा ही युक्ति-युक्त

और रहस्यपूर्ण तरीका है।

परमात्मा सर्व-समर्थ होते हुए भी –
सभी को निश्चयवान क्यों नहीं बना देते?

ऊपर बताए गए रहस्यों को न जानने के कारण लोग अनेक प्रकार के प्रश्न करते हैं। वे कहते हैं – 'परमात्मा सर्व समर्थ होते हुए भी सभी मनुष्यों को अपने प्रति सम्पूर्ण निश्चयवान क्यों नहीं बना देते?' परन्तु विचार करने की बात है कि यदि परमात्मा अपनी ही सामर्थ्य से सभी को सम्पूर्ण श्रद्धावान बना दें, तब तो मनुष्यों की बुद्धि के लिए पुरुषार्थ का कोई स्थान और आवश्यकता ही न रहे और यदि हर कोई अपना व्यक्तिगत पुरुषार्थ न करे तो हर किसी को जीवनमुक्ति अथवा देव-पद रूपी प्रालब्ध भी किस आधार पर मिले? यदि परमात्मा ही अपने पुरुषार्थ अथवा प्रयत्न से सभी विकारी मनुष्यों को बदल कर देवता बना दें तो देवताओं में भी भिन्न-भिन्न पद (अर्थात् कोई राजा पद, कोई प्रजा पद) कैसे प्राप्त कर सकेगा? इसके अतिरिक्त, भला परमात्मा ही के पुरुषार्थ अथवा कर्म की प्रालब्ध, मनुष्य कैसे भोग सकेंगे जबकि कर्म-विधान ही यह है कि हर-एक आत्मा अपने ही कर्मों का फल भोगता हैं। अत: इस सृष्टि में नियम ही यह है कि सभी मनुष्य अपने आप, अपने-अपने बुद्धिबल से ही परमात्मा को पहचानने का पुरुषार्थ करें।

इस प्रकार, साधारण एवं वृद्ध मनुष्य के तन में परमात्मा के प्रविष्ट होने के बहुत ही गहन रहस्य और बहुत ही लाभ हैं। हाँ,

साधारण तन में अवतरित होने के कारण बहुत लोग उस व्यक्ति को देख कर, परमात्मा को तुच्छ समझते हैं। परन्तु यह बात भी स्पष्ट रहे कि यदि परमात्मा किसी देवताई तन में अवतरित हों और कोई चमत्कार अथवा करामात दिखाएँ तो सभी लोग घर-बार छोड़ कर, भाग कर परमात्मा ही के पास इकट्ठे हो जाएँगे और वहीं बैठ जाएँगे और परिणामस्वरूप संसार का सारा कार्य धंधा वहीं रुक जाएगा और इस भाग-दौड़ तथा गड़बड़ का परिणाम यह होगा कि लाखों मनुष्य दब और कुचल कर मर जाएँगे और उस वातावरण में न तो परमात्मा ज्ञान दे सकेंगे, न ही योग सिखा सकेंगे, बल्कि यह एक तमाशा ही हो जाएगा, एक हलचल ही मच जाएगी और सभी लोग परमात्मा से मिलने की उत्सुकता से एक-दूसरे को पीछे पछाड़ने और स्वयं आगे आने की कोशिश में लग जाएँगे, जिसके परिणामस्वरूप बहुत ही अनर्थ हो जाएगा और कोलाहल मच जाएगा और परमात्मा केवल दर्शन-मूर्ति ही बन कर रह जाएँगे, जबकि परमात्मा का वास्तविक उद्देश्य तो नर-नारियों को कुछ काल तक निरन्तर वास्तविक ज्ञान और योग सिखा कर तथा उनके दैनिक जीवन में उन्हें निर्विकारी बनाना है।

अत: परमात्मा की 'गत-मत' न्यारी ही है। वह साधारण एवं वृद्ध नर-तन में प्रवेश करके जिन मनुष्यात्माओं के सम्पर्क में आते हैं, उन्हें ईश्वरीय ज्ञान और सहज योग की शिक्षा देते हैं। उसे थोड़े ही लोग समझ कर, निश्चयवान हो कर अर्थात् परमपिता परमात्मा को अपने बुद्धि योग बल से पहचान कर, अपने आचरण में लाते हैं। फिर अपने

जीवन में परिवर्तन, ज्ञान की धारणा तथा पवित्रता के प्रभाव से नर-नारी अन्यान्य लोंगो को भी परमात्मा के अवतरित हो चुके होने की सूचना देते, उन्हें अपने अनुभव से निश्चयवान बनाने का पुरुषार्थ करते तथा ईश्वरीय ज्ञान और योग से लाभान्वित करते हैं। तब वे अन्य मित्रों, सुहृदों अथवा परिचित तथा अपरिचित लोगों को भी ईश्वरीय सन्देश देते, ज्ञान तथा योग-विधि से परिचित कराते और संस्कारों को बदलने की मति देते हैं।

इस प्रकार, स्थान-स्थान पर ज्ञान-यज्ञ होते अथवा ईश्वरीय विद्या के विद्यालय खुलते हैं और मनुष्य स्वयं भी नित्यप्रति इस सर्वोत्तम विद्या को धारण करते तथा दूसरों को भी परिचित करा के, सर्वोत्तम ज्ञान-दान द्वारा अपनी सर्वोत्तम प्रालब्ध बनाते हैं। परन्तु कुछ मनुष्य सतोगुण की ओर न बढ़ कर अथवा निष्पक्ष भाव से ईश्वरीय ज्ञान को समझने का प्रयत्न न करने के कारण, उलट-पुलट सोचने में अथवा व्यर्थ की उधेड़-बुन में ही वह सुहावना समय गुजार देते हैं और अन्त की घड़ी में पछताते हैं, परन्तु तब तो अत्यन्त देर हो गई होती है। काश ! ऐसी भूल का कोई शिकार न बने !

परमात्मा का अवतरण होने पर उनकी पहचान

'परमपिता परमात्मा अवतरित होते हैं या नहीं' - यह एक बड़ा महत्त्वपूर्ण विषय है। परन्तु आज भारत में जब लोग देखते हैं कि यहाँ जो-कोई भी साधुवेश धारण करता है अथवा तथा-कथित 'गुरु' बन जाता है, वही स्वयं को परमात्मा का अवतार घोषित करने लगता है अथवा उसके शिष्य या अनुयायी उसे अवतार मानने लगते हैं, तो वे बहुत उलझन में पड़ जाते हैं और सोचते हैं कि आखिर सत्यता क्या है? क्या ये सभी परमात्मा के अवतार हैं ? या इनमें से कोई भी अवतार नहीं हैं? इस हालत को देख कर या तो वे परमात्मा के अवतरण की चर्चा में रुचि लेना छोड़ देते हैं और इसे धर्म के ठेकेदारों का ढोंग मानने लगते हैं या कई गम्भीर लोग अधिक गहराई से सोचने लगते हैं कि यदि परमात्मा अवतरित होते हैं तो उनकी पहचान क्या हैं?

जब सामान्य रूप से सारे संसार की और विशेष रूप से भारत की ऐसी दशा हो जाती है तब परमपिता परमात्मा अवतरित होते हैं और उनके अवतरण से इस विषय में सत्यता अधिक स्पष्ट तथा अनुभवगम्य हो जाती है। परमपिता परमात्मा स्वयं ही इस विषय पर प्रकाश डालते हैं और विवेक युक्त रीति से समझाते हैं कि उनका अवतरण दूसरे शब्दों में 'परकाय प्रवेश' है और कि वे माता के गर्भ से जन्म नहीं लेते। परमपिता परमात्मा के अवतरण की यह

सबसे बड़ी पहचान है क्योंकि अन्य मनुष्य, साधु, सन्त तथाकथित गुरु इत्यादि, जो स्वयं को परमपिता का अवतार घोषित करते हैं, यह नहीं कह सकते कि उनका जन्म माता के गर्भ से नहीं हुआ और यदि वे यह कहें कि परमात्मा ने उनकी काया में प्रवेश किया है तो वे विवेक-संगत और युक्ति-युक्त रीति से यह नहीं बता सकते कि परमात्मा कहाँ से अवतरित हुए हैं, उनका क्या स्वरूप है, वे किस ईश्वरीय कार्यार्थ यहाँ आये हैं, उस कार्य को वे कैसे सम्पन्न करेंगे, भविष्य में उनका क्या कार्यक्रम है, आदि आदि।

इसके अतिरिक्त, परमपिता परमात्मा का अवतरण होने पर उनकी पहचान के लिए अन्य भी बहुत-सी युक्तियाँ हैं। इस विषय में हमारा जो अनुभव है, उसे हम दृष्टान्तों द्वारा स्पष्ट करेंगे। इस प्रसंग में, आदि शंकराचार्य की 'परकाय प्रवेश' की जो बात प्रसिद्ध है, उसका संक्षिप्त उल्लेख करके हम परमपिता परमात्मा शिव के अवतरण अथवा परकाय प्रवेश की बात पर कुछ प्रकाश डालेंगे:
शंकराचार्य के परकाय प्रवेश का दृष्टान्त –

सभी जानते हैं कि शंकराचार्य ने अद्वैतवाद का खूब प्रचार किया। इसी सिलसिले में वे एक प्रसिद्ध विद्वान मण्डन मिश्र से भी मिले और उससे, उन्होंने शास्त्रार्थ भी किया। मण्डन मिश्र शास्त्रार्थ में हार गए। इस शास्त्रार्थ में मध्यस्थ बनी थीं मण्डन मिश्र की धर्मपत्नी, जिनका नाम सरसवाणी था। सरसवाणी ने शंकराचार्य से कहा कि मैं मण्डन मिश्र कि अर्द्धांगिनी हूँ और आप वाद-विवाद में मुझे भी हराइये, तभी आप विजयी माने जाएँगे। उसने शंकराचार्य से गृहस्थ-सुख अथवा

दाम्पत्य सुख के बारे में प्रश्न किया। शंकराचार्य ने सोचा कि यदि मैं गृहस्थ-सुख, पति-पत्नी सम्बन्ध या दाम्पत्य-सुख के बारे में अपने ज्ञान-बल के आधार पर कुछ कहूँ तो हो सकता है कि संन्यास आश्रम पर या मुझ पर ही धब्बा लगे और लोग कहें कि -'तुमने गृहस्थ-सुख का भोग किया है, तभी तो तुम व्यवहारिक अनुभव की यह बात बता सके हो' और यदि मैं इनका उत्तर न दूँ तो मैं हार जाऊँगा, मुझे गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करना पड़ेगा। क्योंकि वाद-विवाद की शर्त यह थी कि यदि शंकराचार्य दाम्पत्य जीवन के सुख के बारे में न बता पाये तो उन्हें भी गृहस्थ को ग्रहण करना पड़ेगा। इसी सोच में शंकराचार्य चुप बैठे रहे। आखिर सरसवाणी ने कहा-'आपको एक महीने की मोहलत (अवधि) देती हूँ। मेरे प्रश्न का उत्तर आप एक मास तक दे सकते हैं।'

कहते हैं कि इसके बाद शंकराचार्य गम्भीर विचारों में डूबे हुए एक वन में जा रहे थे और उनके साथ उनके प्रमुख शिष्य पद्मपाद तथा अन्य शिष्य भी थे। उनकी आँखों में शोक की छाया थी ।परन्तु एक स्थान पर पहुँचने पर वह खुशी में भर कर बोले-'पद्मपाद, मुझे अपने दिल की व्यथा दूर करने का उपाय मिल गया है।' वहाँ एक राजा की लाश पड़ी थी। शंकराचार्य ने कहा-'पद्मपाद, यह जो राजा मरा पड़ा है, मैं इसके शरीर में प्रवेश करूँगा। तब मैं उसकी राजधानी में जाऊँगा और वहाँ कुछ समय तक राज्य कारोबार चलाऊँगा। इसी दौरान में मैं सरसवाणी के प्रश्नों का उत्तर भी ढूँढ निकालूँगा। जब तक

मैं वहाँ रहूँ तब तक आप मेरे इस शरीर को एक गुफा में रखना। मेरा अपना जो शरीर है, इससे मैं भोग-सुख पाना उचित नहीं समझता। अब मैं राजा के शरीर में प्रवेश करने वाला हूँ।'

यह सुन कर पद्मपाद ने कहा – 'चाहे आप ज्ञानियों के संग में रहें या राजमहल में रानियों के संग में और आप पर चाहे उस वातावरण का प्रभाव न भी पड़े परन्तु मैं समझता हूँ कि जन-सामान्य इसे ठीक तरह न समझ पायेंगे। आत्मा के चिन्तन में रहने वाले लोगों के लिए, चाहे यह शरीर जहाँ भी रहे, इसका चिन्तन नहीं होता। अत: आप इस बात को छोड़ दें और व्यर्थ में अपयश का शिकार न हों।' यह कह कर पद्मपाद रोने लगे।

शंकराचार्य ने कहा – 'पद्मपाद, तुम्हें दु:ख इसलिए होता है कि तुम इसे मेरे लिए परीक्षा समझते हो। परन्तु मैं यदि इस परीक्षा में न पढ़ूँ तो सत्य को ही इसका शिकार होना पड़ेगा। उसे टालने के लिए मैं अपयश मोल लेने के लिए भी तैयार हूँ। संन्यासी ही रह कर मैं गृहस्थ जीवन की बात करूँ तो लोग मुझे ढोंगी समझेंगे। इसलिए, परकाय प्रवेश ज़रूरी जान पड़ता है। अब तो मैं यह सोचता हूँ कि गृहस्थजीवन और संन्यास आश्रमों के नियमों का भंग हो गया तो ठीक नहीं रहेगा। परन्तु मेरे जीवन में एक समय ऐसा भी आने वाला है, जब मैं संन्यास आश्रम के भी सारे नियम त्याग दूँगा, अब मैं इस ज्ञान द्वारा सरसवाणी को पछाड़ने के लिए संन्यास आश्रम के नियमों की रक्षा कर रहा हूँ।'

यह कह कर शंकराचार्य ने अपनी योग-विधि से उस राजा (जिसका नाम अमरूक था) के शव में प्रवेश किया और वह उसकी राजधानी में चले गए। राजा को कई दिनों के बाद लौटते देख सारी राजधानी में खुशी की धूम मच गई। अपने राजा की बुद्धि में अचानक वृद्धि देख कर मन्त्रिगण चकित हो गए। सदा सुख-भोग में लगा रहने वाला कैसे आत्म-ज्ञानी हुआ – इस बात को न समझ सकने पर रानियाँ भी हैरान-सी रह गईं।

मन्त्री ने परकाय प्रवेश को कैसे पहचाना?

कहते हैं कि राजा के मन्त्री को, जोकि स्वयं भी आत्मज्ञानी था, राजा के विषय में कुछ सन्देह पैदा हो गया। उसको खयाल आया कि यह शायद किसी आत्मज्ञानी अथवा तत्वयोगी आत्मा का परकाय प्रवेश हुआ है, वरना हमारा राजा तो ऐसा था ही नहीं। उसने सोचा कि जिस दूसरे शरीर से यह आत्मा राजा के तन में आई है, यदि उसे जला डाला जाए तो अच्छा होगा ताकि हम पर बुद्धिमान राजा का शासन बना रहे। बस, अनर्थ हो गया। खोजते-खोजते उन्होंने वन की गुफ़ा में शंकराचार्य के शरीर का पता लगा लिया। उन लोगों ने चिता बना कर शव को उस पर रख दिया और आग सुलगा कर वे लौट गए। इधर अवधि को पूरा होते देख शंकराचार्य के शिष्य वन में आये तो उन्हें यह देख कर बहुत दु:ख हुआ कि शंकराचार्य का शरीर चिता पर आग की लपटों में है। पद्मपाद के हृदय में एक करुण पुकार उठी और उसकी भक्ति तथा पुकार से खिंच कर शंकराचार्य की आत्मा,

राजा अमरूक का शरीर छोड़कर अपने शरीर में आ प्रवेश हुई और वे चिता से उठ कर दौड़े। परन्तु शरीर में प्राणों के लौटने से पहले आग ने उनका एक हाथ झुलसा दिया था। यह देख कर पद्मपाद बहुत दुःखी हुए और उन्होंने शंकराचार्य से कहा -'स्वामी, मेरे लक्ष्मी नरसिंह की स्तुति करके अपना खोया हाथ वापस पाइये। मुझ में तो इस समय वह योग्यता नहीं कि मैं मन एकाग्र करके प्रार्थना कर सकूँ, इसलिए आप से कहता हूँ कि आप ही प्रार्थना कीजिए। आचार्य ने प्रार्थना की कि नरहरि की कृपा से शंकराचार्य का हाथ स्वस्थ हो गया। उसके बाद वे सरसवाणी के घर गए और उन्होंने विजय प्राप्त की।

परकाय प्रवेश के सिद्धान्त को अद्वैतवादी, सभी सनातन धर्मी, आर्य समाजी तथा अन्यान्य सम्प्रदाय के लोग भी मानते हैं। ऊपर, उस सिद्धान्त सम्बन्धी एक वृत्तान्त को हमने दृष्टान्त के रूप में दिया है। इसके द्वारा हम सबसे पहले तो आपका ध्यान इस बात की ओर खिंचवाना चाहते हैं कि राजा अमरूक के मन्त्री, परकाय प्रवेश की बात को इस प्रकार जान सके कि **राजा के जो स्वभाव और संस्कार थे, वे दिखाई नहीं दिये।** रानियों ने भी यह बात नोट की। मन्त्री ने देखा कि इनमें एकाएक आत्मज्ञानी अथवा वैरागी के संस्कार कैसे आ गए और एकदम से इसकी बुद्धि इतनी प्रतिभाशाली कैसे बन गई? उसने यह निष्कर्ष निकाला कि अवश्य इसमें कोई आत्मज्ञानी, तत्वयोगी, पवित्रता के नियमों को पालन करने वाली, वैरागी आत्मा आई है, परन्तु परकाया प्रवेश करने वाली उस आत्मा को परमात्मा नहीं माना

क्योंकि उसमें तत्व-योगी के लक्षण तो थे, परमात्मा के लक्षण नहीं थे।

उपर्युक्त के आधार पर हम परमपिता परमात्मा के अवतरण अर्थात् परकाय प्रवेश होने पर, उनको भी निम्नलिखित लक्षणों अथवा गुणों की उपस्थिति से पहचान सकते हैं –

परमात्मा प्रायः लुप्त हुआ सत्य-सनातन ज्ञान देते हैं

(१) जिस मनुष्य के तन में परमपिता परमात्मा 'परकाय प्रवेश' करते हैं, उसमें भी उस मनुष्य के लक्षण न दिखाई दे कर परमात्मा के लक्षण अथवा गुण दिखाई देते हैं। उसके मुख से जो वाक्य निकलते हैं, उनमें जो ज्ञान होता है, वह उस मनुष्य की जानकारी और सामर्थ्य से बाहर होता है अर्थात् कोई भी मनुष्य उसका उद्गम नहीं हो सकता। इसलिए, उसके कुछ संस्कारी और प्रभु-प्रेमी स्वजन ऐसा सोचने लगते हैं कि इसमें परकाय प्रवेश हुआ है। परमपिता परमात्मा स्वयं उसके मुख द्वारा धीरे-धीरे अपना परिचय भी देते हैं जिसे उस मनुष्य की आत्मा भी सुन-सुन कर शिक्षित होती, हर्ष अनुभव करती तथा उन महावाक्यों के अनुसार अपने जीवन को ढ़ालने का पुरुषार्थ करती है।

परमात्मा का अवतरण वृद्ध एवं अनुभवी तन में वह शास्त्रों का आधार नहीं लेते

(२) शंकराचार्य अपने तन में तो अनुभवी नहीं था, इसलिए शंकराचार्य ने राजा अमरूक के तन मे प्रवेश करने का संकल्प किया। परन्तु परमपिता परमात्मा शिव – एक वृद्ध, अनुभवी, वानप्रस्थ अवस्था वाले, मनुष्य के तन में परकाय प्रवेश करते हैं। शंकराचार्य

तो एक मनुष्यात्मा थे, उन्होंने वेदों और वेदान्त का आधार लेकर अथवा गुरु की दीक्षा तथा व्यास की शिक्षा के आधार पर आत्मज्ञान का प्रचार किया। परन्तु परमपिता परमात्मा तो स्वयं ज्ञान के सागर और त्रिकालदर्शी हैं, वे किसी व्यासकृत या **मनुष्यकृत शास्त्र का आधार नहीं लेते और न ही किसी गुरु से दीक्षा लेते हैं,** बल्कि जिस मनुष्य के तन में वे प्रवेश करते हैं उसके द्वारा वे अपने ही ज्ञान-भण्डार से सहज ज्ञान देते हैं, शंकराचार्य ने तो कहा था कि मैं शास्त्रार्थ में विजय प्राप्त करने के बाद संन्यास के नियमों को छोड़ दूँगा परन्तु परमात्मा के लिए तो सभी मनुष्यात्माएँ उनकी सन्तान हैं, अत: उन्हें किसी को शास्त्रार्थ में हराने की चेष्टा नहीं होती बल्कि वे तो सत्य को स्पष्ट करने के लिए और लोक-कल्याणार्थ मनुष्यमात्र को ज्ञान देते हैं। इसलिए वे कोई संन्यासी वेश नहीं लेते।

भाषा साधारण परन्तु ओजस्वी

(३) शंकराचार्य की आत्मा जिस राजा के तन में प्रविष्ट हुई उसके मुख द्वारा जब वह बोलती थी तो उसकी भाषा और आवाज़ वैसी ही होती थी, जैसे राजा की; वरना तो सभी तुरन्त पहचान जाते कि यह राजा नहीं है बल्कि अन्य कोई है। हाँ, उसकी बात और बात करने के ढंग में ज्ञान तथा गुणों का पाया जाना मालूम होता था। इसी प्रकार, परमपिता परमात्मा शिव, जब एक मनुष्य के तन में प्रविष्ट होकर ज्ञान सुनाते हैं, तब उनकी भी भाषा या उनका स्वर तो वैसे ही होता है जैसे कि उस मनुष्य का पहले था। परन्तु उन शब्दों में

अलौकिकता भरी होती है और उच्च कोटी का ज्ञान भरा होता है। इसलिए साधारण लोग उन्हें झट से नहीं पहचान सकते।

प्रवेश चिरकाल तक या लगातार नहीं

(४) पुनश्च, शंकराचार्य की आत्मा जिस राजा के तन में गई थी, उसे तो उस शरीर में कुछ काल तक गृहस्थ का अनुभव करने के लिए रहना था। परन्तु परमात्मा जिस तन में प्रविष्ट होते हैं, उन्हें उस तन में कई दिन या कई मास लगातार रहने की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि उन्हें कुछ अनुभव नहीं करना होता। अत: वह तो जब-कभी भी उस तन में प्रविष्ट होते हैं तो उसमें केवल उतना समय रहते हैं जितना समय कि उन्हें ज्ञान देना होता है। फिर वह वहाँ से चले जाते हैं और जब फिर ज्ञान देना हो, तब फिर आ जाते हैं।

परमात्मा का प्रवेश — 'सन्निवेश' होता है

(५) इसके अतिरिक्त, शंकराचार्य की आत्मा ने जिस काया में प्रवेश किया था, उसमें उस समय राजा की आत्मा का वास नहीं था। परन्तु परमपिता परमात्मा का जिस मनुष्य की काया में सन्निवेश होता, उसमें तो उस मनुष्य की आत्मा भी रहती है। अत:जब-कभी परमपिता परमात्मा उस शरीर को छोड़ कर चले जाते हैं तो भी उसमें उस मनुष्य की आत्मा के वास के कारण जीवन-शक्ति तो रहती ही है।

न्यारा जन्म

(६) शंकराचार्य की आत्मा का राजा की आत्मा में जाना गोया

नया जन्म लेना था जोकि माता के गर्भ से नहीं था बल्कि एक प्रौढ़ अवस्था वाले शरीर में परकाय प्रवेश द्वारा था। इसी प्रकार परमपिता परमात्मा जब एक वृद्ध अवस्था वाले, अनुभवी मनुष्य की काया में प्रवेश करते हैं तो वह उनका भी अलौकिक जन्म है, जिसे कि गीता में 'दिव्य जन्म' कहा गया है।

परमात्मा तीनों कालों, तीनों लोकों, तीनों देवताओं, गुणों आदि का ज्ञान देते हैं

(७) परमपिता परमात्मा त्रिलोकीनाथ और त्रिकालदर्शी हैं। अत: वह प्रजापिता ब्रह्मा के तन में प्रविष्ट हो कर जो ज्ञान देते हैं, उसकी यह एक विशेषता है कि वह तीनों लोकों एवं कालों के बारे में स्पष्ट तथा विवेकयुक्त रीति से प्रकाश डालता है और अनुभवगम्य होता है तथा मनुष्य के व्यवहारिक जीवन से भी उसका सम्बन्ध होता है। अन्य कोई भी आत्मा ऐसा ज्ञान नहीं दे सकती। कोई भी मनुष्यात्मा, चाहे वह कोई आत्मज्ञानी, तत्वदर्शी, तत्व योगी या हठयोगी क्यों न हो, वह सृष्टि के आदि, मध्य और अन्त का ज्ञान नहीं दे सकती। एक परमात्मा ही जन्म-मरण से रहित, सदा साक्षी और सर्वज्ञाता हैं, अत: उनके ज्ञान में यह भी विशेषता है कि उनसे सभी आत्माओं के जन्म-जन्मान्तर अथवा अनेक जन्मों की कहानी का तथा सभी मुख्य धर्म-सम्प्रदायों की स्थापना, पालना, विनाश के चक्र का बोध होता है। मनुष्यात्मा ने कितने जन्म लिए और यह संसार किन अवस्थाओं से अब तब गुज़रा है तथा आगे इसकी क्या अवस्था होने वाली है, इसका

स्पष्ट चित्रण परमात्मा के सिवा कोई भी नहीं कर सकता। मुक्ति क्या है आत्मा मुक्ति की अवस्था में कहाँ होती है, फिर इस सृष्टि में क्यों आती है, फिर क्या होता है, यह भेद भला परमात्मा के सिवा कौन खोल सकता है?

पुनश्च, यह संसार रूपी खेल क्या है? यह कैसे चलता है? इसको तो मनुष्य-सृष्टि का 'रचयिता' स्वयं ही बता सकता है। आत्माओं में भी परस्पर क्या अन्तर है, स्वयं परमात्मा का अपना स्वरूप क्या है, परमात्मा के साथ उनका क्या सम्बन्ध है, इसका मौलिक, सरल, स्पष्ट एवं सम्पूर्ण ज्ञान परमात्मा ही परकाय प्रवेश करके दे सकते तथा अनुभव करा सकते हैं और सबसे बड़ी बात यह है कि परमात्मा जब स्वयं परकाय प्रवेश करके ज्ञान देते हैं तो उसके बाद नये युग (सतयुग) का, अथवा नई सृष्टि का निर्माण होता है और मनुष्य पवित्र एवं दिव्य गुणधारी हो कर देवता बन जाता है। परमात्मा द्वारा ज्ञान-प्रकाश होने पर दैवी सम्प्रदाय अथवा आदि सनातन दैवी धर्म की पुन: स्थापना होती है और उसके शीघ्र बाद विश्व के आसुरी स्वभाव के सभी लोग और सभी विपरीत धर्म नष्ट हो जाते हैं। अत: परमात्मा जब परकाय प्रवेश करते हैं तो दूसरी ओर आसुरी सम्प्रदाय के महाविनाश के लिए ऐटम और हाइड्रोजन बम, जिन्हें मूसल या अग्नेयास्त्र इत्यादि कहा जाता है, तैयार हो जाते हैं। गीता – परमात्मा के अवतरण के समय के इन चिन्हों की साक्षी है।

परमात्मा विकारों पर विजय दिलाते हैं

(८) परमपिता परमात्मा जब अवतरित होते अथवा परकाय प्रवेश करते हैं तो उनके ज्ञान में आचार की श्रेष्ठता की भी पराकाष्ठा होती है। उनके ज्ञान से मनुष्य का देह-अभिमान चूर-चूर हो जाता है और मनुष्य ऐसा आत्मनिष्ठ हो जाता है कि वह **सपत्नीक जीवन व्यतीत करते हुए भी काम-वासना से प्रभावित नहीं होता, क्रोध-उत्पादक परिस्थिति में भी क्रोधावेश के वश नहीं होता।** परमपिता परमात्मा जिस योग की शिक्षा देते हैं, उससे मनुष्य की अवस्था एकरस और कर्मातीत होने लगती है और उसे संसार की असारता और भावी विनाश की ऐसी घुट्टी पिलाई जाती है कि उनका मन उपराम हो जाता है, दृष्टि आत्मिक हो जाती है, आहार सात्त्विक हो जाता है, जीवन संयमी हो जाता है, व्यवहार दैवी हो जाता है, कर्मेन्द्रियाँ वश में हो जाती हैं, बुद्धि प्रभु की प्राप्ति में जुट जाती हैं, मन विषय विकारों से हट कर अव्यभिचारी ईश्वर-चिन्तन का रस लेने वाला हो जाता है, स्वभाव में मिठास आ जाता है, दूसरों के प्रति दया जागृत होती है और मनुष्य दूसरों की सेवा में तत्पर रहता हुआ अपने जीवन को कमल के फूल के समान बनाता है।

एक परमात्मा शिव ही को 'कामारि', अर्थात् काम विकार का नाश करने वाला माना गया है। अतः उनका अवतरण होने पर उनकी यह मुख्य पहचान है कि वे मनुष्य के मन से काम वासना को कुरेदकर निकाल देते है। वे उन्हें यह शिक्षा देते हैं कि वे अपने घर-गृहस्थ से 'काम' को बिल्कुल की निकाल और पछाड़ दें। वे

अहिंसा और दिव्य गुणों की धारणा का ऐसा उच्च और स्पष्ट आदर्श मनुष्य मात्र के सामने रखते हैं जोकि अन्य कोई नहीं रख सकता। इससे मनुष्यात्मा को इसी जीवन में पूर्ण पवित्रता और अतीन्द्रिय सुख का लाभ होता है क्योंकि परमात्मा सुख और शान्ति के दाता हैं। मनुष्य या तो गृहस्थियों के लिए काम-वासना को जीतना असम्भव बताते हैं और या बैकुण्ठ के सुख का निषेध कर केवल शान्ति ही की प्राप्ति का उपदेश देते हैं। परन्तु परमात्मा शिव परकाय प्रवेश करके, मनुष्य को कामजीत बनाने वाला और मुक्ति तथा स्वर्गिक सुख देने वाला सर्वोत्तम ज्ञान देते हैं।

पिता-जैसा स्नेह और पैतृक सम्पत्ति

(९) सभी इस बात को मानेंगे कि पिता की पहचान यह है कि वह व्यवहारिक रूप से पिता-जैसा स्नेह और पैतृक सम्पत्ति प्रदान करता है। एक शिक्षक की पहचान यह है कि वह शिक्षा देता है। इसी प्रकार, कल्याणकारी परमपिता परमात्मा की पहचान यह है कि वह सभी नर-नारियों को आत्मिक दृष्टि से देखते हुए, उन्हें अपनी अविनाशी सन्तान मानते हुए वैसा ही शुद्ध और कल्याणकारी प्यार देता है जैसा कि पिता अपने वत्सों को अथवा शिक्षक अपने विद्यार्थियों को देता है। वह नर-नारियों को ऐसे स्नेह से और ऐसी सहानुभूति से, इतनी कल्याणकारी शिक्षा देता है कि जिससे मनुष्य सहज ही विकारों पर विजय प्राप्त कर लेता है और प्रभु मिलन का सुख अनुभव करता है। परन्तु इस आत्मिक सुख का अधिकार उसे मिलता है जो आत्मिक

दृष्टि को अपनाता है, देह-अभिमान को त्यागता है और 'काम' वासना को महाशत्रु मान कर पवित्र रहता तथा परमात्मा ही से प्रीति जोड़ता है। अन्य कोई भी आत्मा सभी आत्माओं को 'पुत्र दृष्टि से नहीं देख सकती और उन्हें माता-पिता, बन्धु-शिक्षक आदि सभी आत्मिक सम्बन्धों का अव्यक्त अनुभव नहीं दे सकती है जैसे कि परमात्मा परकाय प्रवेश करने पर दे सकते हैं।

परमात्मा पूर्णाधिकारी

(१०) परमात्मा ज्ञान और योगादि विद्याओं के एकमात्र अधिकारी एवं सम्पूर्ण ज्ञाता (Authority) हैं। वे सभी मनुष्यात्माओं के पिता हैं और चाहे कोई किसी धर्म का अनुयायी अथवा किसी सत्ता का अधिकारी क्यों न हो, वे सभी को निर्भय हो कर समझाने तथा उसे सन्मार्ग की बात कहने के अधिकारी हैं। अत: परमपिता परमात्मा जब परकाय प्रवेश करते हैं तो वे उसी अधिकार और उसी सम्बन्ध या नाते से सभी प्रकार के मनुष्यों को उनके कल्याणार्थ स्पष्ट रूप से शिक्षा देते हैं। अन्य कोई भी आत्मा, इस अधिकार तथा उस सम्बन्ध से बात करने की क्षमता, योग्यता या अधिकार नहीं रखती।

दिव्य दृष्टि का दान

(११) इसके अतिरिक्त, परमपिता परमात्मा दिव्य दृष्टि द्वारा साक्षात्कार भी कराते हैं। परन्तु साक्षात्कार के लिए भी पात्रता की आवश्यकता है। गीता में स्पष्ट उल्लेख है कि भगवान ने साक्षात्कार भी कराया और बताया कि – 'मैं प्रवेश होने योग्य हूँ, इस साधारण

तन में अवतरित हुआ मैं परमात्मा हूँ।' उन्होंने कहा कि – 'तू मुझे अति प्रिय है, इसलिए तुझे ही दिव्य दृष्टि दे कर मैं यह साक्षात्कार करा रहा हूँ।' स्पष्ट है कि परमपिता परमात्मा साक्षात्कार भी उसी को कराते हैं जिसमें उसके अनुकूल भक्ति आदि के संस्कार हों या किन्हीं पूर्व कर्मों का कोई फल हो या जिसके लिए वे उचित समझें। साक्षात्कार के वरदान के लिए उन्हें कोई विवश नहीं कर सकता।

अवतरण की पहचान दिव्य बुद्धि और दिव्य दृष्टि द्वारा

इस प्रकार, परमपिता परमात्मा जब अवतरित होते या परकाय प्रवेश करते हैं तो इन तथा अन्यान्य विशेषताओं से उनकी पहचान हो सकती है। परमात्मा कोई स्थूल वस्तु तो है नहीं कि उन्हें इन स्थूल नेत्रों से देखा जा सके। वह तो **'ज्योतिबिन्दु'** है। उन्हें जानने के लिए **दिव्य-बुद्धि** अर्थात् ज्ञाननिष्ठ एवं निर्विकारी बुद्धि चाहिए और **दिव्य-चक्षु** चाहिएँ।

पीछे, हम 'आदि शंकराचार्य' के परकाय प्रवेश का जो वृत्तान्त या दृष्टान्त बता आये हैं, उससे स्पष्ट है कि राजा अमरूक का मन्त्री कोई चर्म चक्षुओं से तो पहचान नहीं सका था कि राजा अमरूक के शरीर में किस आत्मा का प्रवेश है, बल्कि वह उस शरीर में व्यक्त हुई आत्मा के गुणों तथा लक्षणों ही से यह नतीजा निकाल सका कि इस शरीर में कोई तत्वयोगी आत्मा प्रविष्ट है। परमपिता परमात्मा के परकाया प्रवेश को पहचानने के लिए तो इससे भी अधिक जागरूकता

तथा बुद्धि की प्रतिभा और दिव्यता की आवश्यकता हैं क्योंकि शंकराचार्य तो जिस तन में प्रवेश हुए थे वह एक शव था, अर्थात् उसमें राजा अमरूक की आत्मा न थी परन्तु परमपिता परमात्मा जिस मनुष्य के तन में प्रवेश करते हैं, उसमें तो उस मनुष्य की 'अपनी' आत्मा भी रहती ही है और परमात्मा भी सन्निवेश करते हैं। अत: उस तन में किसी समय तो केवल एक आत्मा (उसी मनुष्य की आत्मा) होती है और वह भी ईश्वरीय ज्ञान में अभ्यस्त हो जाने के कारण कई बार ज्ञान देती है और अन्य किसी समय परमपिता परमात्मा उस आत्मा पर प्रभाव डाल कर उस मनुष्य के मुख द्वारा स्वयं ज्ञान सुनाते हैं। अत: कभी उस मनुष्य के लक्षण देख कर सन्देह उठने की सम्भावना हो सकती है। इसके परिणामस्वरूप परमपिता परमात्मा के परकाय प्रवेश करने पर कोई विरला ही उन्हें पहचान पाता है। गीता में भी उसके महावाक्य हैं कि – 'इस साधारण तन में अवतरित मुझ परमात्मा को कोटी-कोटी मनुष्यों में से कोई विरला ही पहचानता है', गीता में बहुत स्थानों पर परमात्मा के लिए 'मैं' शब्द का प्रयोग है क्योकि गीता में कुछ वाक्य उस मनुष्य के हैं जिसके तन में परमात्मा ने प्रवेश किया और जिसने परमात्मा का ज्ञान सुना और उसका अभ्यास किया।

पुनश्च, ऊपर शंकराचार्य के परकाय प्रवेश के वृत्तान्त में आपने ध्यान दिया होगा कि जब पद्मपाद ने दु:ख से पुकार की तो शंकराचार्य राजा अमरूक के तन को छोड़ कर वापस अपने शरीर में लौट आए।

इसी प्रकार, जब सृष्टि में सभी आत्माएँ दु:ख में होती हैं और भक्तों पर अत्यन्त पीड़ा होती हैं तब परमपिता परमात्मा भी परमधाम से इस सृष्टि में आ कर परकाय प्रवेश करते हैं और वे उसी तन में बैठ नहीं जाते बल्कि थोड़ी-थोड़ी देर ज्ञान सुना कर परमधाम चले जाते हैं और फिर-फिर आ कर ज्ञान सुना जाते हैं और या तो जगह-जगह भक्तों की पुकार सुन कर क्षण से भी अत्यन्त अल्प समय में वहाँ-वहाँ पहुँच जाते हैं। परन्तु जैसे किसी प्रालब्ध कर्म के फलस्वरूप शंकराचार्य की भुजा जल गई, परमात्मा का कोई प्रालब्ध कर्म नहीं है बल्कि प्रालब्ध कर्म केवल उस मनुष्य के हैं जिसमें परमात्मा प्रविष्ट होते हैं। पुनश्च, शंकराचार्य ने नरहरि की जो प्रार्थना की कि उसकी भुजा स्वस्थ हो जाए, इससे स्पष्ट है कि शंकराचार्य स्वयं भगवान या परमात्मा नहीं थे परन्तु परमात्मा जब-जब परकाय प्रवेश करते हैं तो वे कर्मभोग से न्यारे रहते हैं।

इन सभी बातों को ध्यान में रखने से परमपिता परमात्मा के अवतरण को समझने में हमें सुविधा हो सकती है।

अगले पृष्ठों में हम समाचार पत्रों में छपे समाचारों के आधार पर इस विषय को और अधिक स्पष्ट करेंगे।

समाचार पत्रों के आधार पर स्पष्टीकरण

अब हम परमात्मा के दिव्य जन्म, परकाय प्रवेश अथवा अवतरण के बारे में कुछेक दृष्टान्त देते हैं जोकि वर्तमान समय समाचार पत्रों में प्रकाशित हुए हैं। बहुत पहले की बात पर तो शायद किसी का विश्वास न भी हो, यह तो अभी कुछ ही वर्ष पहले के समाचार हैं और जिन व्यक्तियों से सम्बन्धित हैं, वे अभी भी जीवित हैं तथा जिन समाचार पत्रों में ये प्रकाशित हुए हैं वे अभी भी प्रकाशित होते हैं। अतः उन दोनों से इनकी सत्यता की साक्षी मिल सकती है।

समाचार

'एक मुस्लिम पीर (धर्म-गुरु) के रूप में जीवन व्यतीत करने के बाद, लुधियाना जिले के एक गाँव में, १५ अगस्त, १९६८ को जन्म लेने का एक रोमाँचकारी वृत्तान्त हुआ है। उस मुस्लिम पीर की कब्र उत्तर प्रदेश में, एक जगह है। उस पीर की आत्मा 'मनमोहन' नामक एक नौजवान लड़के, जोकि अभी नवीं कक्षा का विद्यार्थी है, के शरीर से चिपट गई। यह लड़का मनमोहन सिंह, डा॰ शेरसिंह का लड़का है जो कि सहारनपुर के पास के एक उपनगर के वासी हैं। डाक्टर शेरसिंह ने उस लड़के का बहुत इलाज किया और भूत-प्रेत निकालने वाले स्यानों (विशेषज्ञों) और पीरों-फकीरों के पास भी गए, वह करतारपुर, मालेर कोटला और डेरा बड़भाग सिंह[१] में भी गए परन्तु कुछ न बना। मालेर कोटला में जब एक स्याना* (भूत निकालने वाला

---

१. ये पंजाब के तीन शहरों के नाम हैं। * भूत निकलने वाला व्यक्ति।

व्यक्ति) उसका भूत निकालने की कोशिश कर रहा था तो उसमें प्रेत की रूह बोल उठी कि – 'तुम यह काम छोड़ दो। मैं भी गण्डे-ताबीज जन्त्र-मन्त्र करता था, इसी वजह से प्रेत बना हूँ। **गण्डे-ताबीज तैयार करने वाले सभी प्रेत बनते हैं'**। इस पर मालेर कोटला वाले उस स्याने ने कहा कि उसे (लड़के को) किसी संत-महात्मा के पास ले जाओ। अत: डाक्टर शेरसिंह लड़के को लेकर कई सन्तों के पास पहुँचे। परन्तु वह रूह न निकली। आखिर वे सन्त राड़े वाला के पास पहुँचे। वह सन्त उस समय हापुड़ में थे। वहाँ संगत लगी हुई थी और पीर की रूह बोल उठी। उसने कहा-'आप बलिए-अल्लाह (ईश्वर के एक उपासक) हैं, मुझे निजात (मुक्ति) दिलाएँ। मैं कुछ मुसलमानों के हमराह (साथ) एक हज़ार वर्ष पहले भारत में आया था। यहाँ आकर मेरी शादी हुई और यहाँ एक लड़की पैदा हुई। वह लड़की बड़ी सुन्दर थी और यह लड़का जिसके जिस्म (शरीर) में अब मैं मौजूद हूँ, उस समय भी इन्सानी जामा (मनुष्य चोले) में था। उसने मेरी लड़की के साथ नाजायज़ ताल्लुकात (वर्जित सम्बन्ध) कायम किए। मैंने उसे मना किया और यह बाज़ न आया (न रुका)। मैं उससे बदला लेने की हसरत (इच्छा) में चल बसा।''

उस (पीर की रूह) ने बतलाया कि – 'मेरी रूह को धर्मराज के सामने पेश किया गया। वहाँ दो फ़रिश्ते मौजूद थे – एक नेकी का, दूसरा बदी (बुराई) का फल देने वाला। मेरे गुनाहों (पापों) और नेकियों (अच्छे कर्मों) का हिसाब-किताब तैयार था। मुझे कहा गया कि तुम प्रेत

बनोगे क्योंकि तुम गण्डे और ताबीज देते रहे हो। मैंने कहा – 'मेरी निजात (मुक्ति) कब होगी?' जवाब मिला-'एक हजार वर्ष के बाद और उसी लड़के के द्वारा होगी जिससे तुम बदला लेना चाहते थे।' कुछ वर्ष पहले मैं दूसरे प्रेतों के साथ अपनी कब्र पर बैठा था कि यह लड़का आया और उसने नज़दीक ही पेशाब कर दिया। मैंने उसे मारना चाहा लेकिन दूसरे प्रेतों ने कहा कि – 'छोड़ दो, बच्चे तो शरारती होते ही हैं।' जब मैं ने गहरी नज़र से देखा तो मालूम हुआ कि यह वही बच्चा है जिससे मैंने बदला लेना था। चुनाचे (अत:) मैं इसके जिस्म (शरीर) में दाखिल (प्रवेश) हो गया। मैं इससे पहले कई-एक मनुष्यों के जिस्म में दाखिल होकर उन्हें मार चुका था लेकिन मैंने इस लड़के को नहीं मारा।

सन्त राड़ेवाला ने कहा कि तुम इस लड़के को छोड़ दो। पीर की रूह ने कहा-'मैं इसे तभी छोडूँगा जब मुझे छुटकारा मिलेगा।' सन्त जी ने कहा, 'मुक्ति मनुष्य-चोले में आने से ही मिल सकेगी, इसलिए तुम्हें जन्म लेना होगा।' उस रूह ने कहा – 'मुझे जन्म मिले तो मैं तैयार हूँ।' रूह ने कहा – 'तब तक मुझे अपनी संगत में रहने दीजिए; इसके बाद जब मेरा जन्म लेने का मौका आयेगा, तब मैं चला जाऊँगा। वैसे मुझे बतलाया गया था कि तुम्हारा छुटकारा १००० वर्ष के बाद होगा और इसी लड़के के द्वारा होगा।'

अत: वह रूह इस लड़के के जिस्म के द्वारा सन्त जी की संगत में रहने लगी। यह सब बातें हापड़ में संत जी की संगत में हुई। कुछ

दिन बाद सन्त जी ने संगत ही में उस पीर (अब प्रेत) को बताया कि वह ललितों के श्री गुरुदेवसिंह के यहाँ लड़के के रूप में जन्म लेगा। **मुझे इन बातों पर विश्वास नहीं आता था लेकिन मैंने स्वयं मनमोहन सिंह के साथ 5 अगस्त से पहले और बाद में मुलाकात की। इस समय उसमें पीर की रूह मौजूद थी।** उस रूह ने मेरे ४० सवालों का जवाब दिया। उसने बताया कि उसका जिस्म (शरीर) लतीफ़ सूरत (सूक्ष्म रूप) में है और वह नरक की आग के बराबर गरम है। उसने कहा-'चूँकि मैं लतीफ़ (सूक्ष्म) शक्ल में हूँ, इसलिए कर कुछ नहीं सकता। मैं शरीर में दाखिल (प्रवेश) होता हूँ। **फिर भी जहाँ चाहूँ जा सकता हूँ। मैं खुद (स्वयं) बोल नहीं सकता लेकिन किसी दूसरे की जुबान (जिह्वा) से बोल सकता हूँ'** मेरी कोई शक्ल नहीं है, मुझे देखा नहीं जा सकता। एक सवाल के जवाब में उसने बतलाया कि **जैसी यह दुनिया है वैसी ही रूहों की दुनिया है** और कि बहुत से लोग प्रेतों के रूप में भी रहते हैं। धर्मराज की शक्ल भी लतीफ (सूक्ष्म) और नूरी (प्रकाशमय) थी। वहाँ बोलने की ज़रूरत नहीं पड़ती, हिसाब-किताब अपने आप हो जाता है। चुँकि सब-कुछ सहज होता है, इसलिए एतराज (आपत्ति या इन्कार) की गुंजाइश नहीं होती। फिर, मैं ६ अगस्त को लड़के मनमोहन सिंह से मिला। उसने बतलाया कि पीर चला गया है, अब मैं अपना जिस्म हल्का-फुलका महसूस करता हूँ जबकि पहले मेरी गर्दन पर कोई चीज़ सवार रहती थी, दिल पर बोझ रहता था, दिमाग भारी रहता था। प्रेत कई साल इसके जिस्म में रहा। उसने जन्म लेने से पहले कहा था कि 'मैं दूसरे बच्चों की तरह

रोऊँगा नहीं, मैं १० या १२ साल यहाँ रहूँगा, फिर प्रभु-भक्ति करूँगा क्योंकि मुझे छुटकारा पाना है।'

समाचार पर विचार

यह समाचार आर्य-समाज के एक समाचार-पत्र (प्रताप) ने छापा है। जिसने यह समाचार लिखा है, वह भी अभी जीवित है। जिसके तन में प्रेत (पीर) की प्रवेशता हुई थी, वह लड़का और उसके पिता भी मौजूद हैं। जिस सन्त से और जिस संगत में यह बातचीत चली, वहाँ भी इस बातचीत की पूछ-ताछ की जा सकती है। अत: यदि किसी को इस वृत्तान्त में कुछ सन्देह हो तो इसकी सच्चाई का पता लगाने के लिए इन सभी से, इस बात की जाँच की जा सकती है। देखा जाय तो जाँच करने की भी आवश्यकता तो नहीं है क्योंकि भारत में परकाय प्रवेश का सिद्धान्त तो सनातन धर्मी,आर्य समाजी, अद्वैतवादी सभी मानते चले आए हैं। ऊपर लिखे समाचार में जिन शब्दों को काले टाईप में दिया गया है और जिन शब्दों के ऊपर अंक दिए गए हैं उन पर ध्यान देने से हम निम्नलिखित निष्कर्ष ले सकते हैं।

परमपिता परमात्मा द्वारा परकाया प्रवेश

आत्मा और परमात्मा में तो गुणों का बहुत ही अन्तर है। परमात्मा ज्ञान के सागर, शान्ति के सागर, आनन्द के सागर, प्रेम के सागर, सर्व-शक्तिवान तथा सर्व आत्माओं के परमपिता हैं। अत: किसी भी 'पीर' का या अन्य किसी आत्मा का दृष्टाँत हम उनके सम्बन्ध में नहीं देना चाहते थे। परन्तु आज, जब कि अवतरण की समस्या उलझी हुई

है, तो लोगों के कल्याणार्थ ही इन दृष्टान्तों द्वारा इसे सुलझाने का प्रयत्न करते हैं।

उक्त समाचार में पीर की अशुद्ध आत्मा द्वारा परकाय प्रवेश के वृत्तान्त का जो उल्लेख है, उस पर विचार करने से आप इस निष्कर्ष पर पहुँचेंगे- (१) परकाय प्रवेश करना शरीर को धारण करने जैसा तरीका है कि जिसमें प्रवेश करने वाले को माता के गर्भ में नहीं जाना पड़ता, न ही उसे किशोर, युवा आदि अवस्थाएँ भोगनी पड़ती हैं। उदाहरण के तौर पर मनमोहन सिंह तो अभी नवीं कक्षा का विद्यार्थी था, उसने माता के गर्भ में वर्तमान शरीर लिया था और उसने शैशव, किशोर आदि अवस्थायें भोगी थीं परन्तु पीर की आत्मा तो मनमोहन सिंह के लड़कपन के शरीर में होते हुए भी वही पीर वाली बातें करती थी। मनमोहन सिंह के तो माता-पिता थे, परन्तु अब पीर ने मनमोहन सिंह का जो शरीर लिया था, उस अवस्था में पीर के कोई माता-पिता न थे। पीर की आत्मा तो मनमोहन सिंह के शरीर द्वारा बोलती थी और सन्त जी की संगत में प्रभु-चर्चा सुनती थी। फिर, जब पीर की आत्मा इस शरीर को छोड़ गई तो भी मनमोहन सिंह का शरीर निष्प्राण या निर्जीव नहीं हुआ। इस दृष्टिकोण से पीर की आत्मा द्वारा देह-त्याग को 'मरना' भी नहीं कहा जा सकता और न ही उसके देह-धारण को 'जन्म' कहा जा सकता है।

इन विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए, आप भगवान के दिव्य-जन्म पर विचार कीजिए जिसका उल्लेख गीता में भी है। भगवान तो

जन्म-मरण से न्यारे हैं परन्तु फिर भी जन्म लेते हैं और वह सारी सृष्टि के माता-पिता तथा कर्मातीत हैं, इसलिए उनके कोई माता-पिता भी नहीं होते। स्पष्ट है कि ऐसा जन्म तो 'परकाय प्रवेश' के रूप में ही हो सकता है परन्तु आज लोग भगवान के इस प्रकार के दिव्य जन्म को नहीं जानते।

फिर, जैसे पीर की आत्मा ने १००० वर्षों के बाद यह पहचान लिया था कि यह वही मनमोहन सिंह है जिससे कि कई जन्म पूर्व उसका झगड़ा था और उसने मनमोहन सिंह के शरीर में प्रवेश किया ताकि मुक्ति प्राप्त करे, वैसे ही ज्ञान के सागर परमपिता परमात्मा शिव भी उस आत्मा को जानते और पहचानते हैं जो कि सतयुग के आरम्भ में श्री नारायण के रूप में होती है और ५००० वर्ष के बाद एक साधारण मनुष्य के रूप में होती है। परमपिता परमात्मा सबको मुक्ति और जीवन-मुक्ति देने के लिए उस साधारण तन में प्रवेश करते हैं और मनुष्यात्माओं को ज्ञान सुनाते हैं। ईश्वरीय ज्ञान सुनाने के लिए परमपिता परमात्मा को भी मुख का आधार लेना पड़ता है, परन्तु वह किसी माता के गर्भ से जन्म नहीं ले सकते क्योंकि वह सभी के माता-पिता हैं, अत: वह भूतपूर्व श्री नारायण की काया में प्रवेश करके यह दिव्य कर्म करते हैं। उसी को वर्तमान जन्म में वह 'प्रजापिता ब्रह्मा' नाम देते हैं।

ध्यान दीजिए कि मनमोहन सिंह को तो यह मालूम ही न था कि वह एक हजार वर्ष पहले वाले जन्म में कौन था और उसने क्या कर्म

किया था। परन्तु पीर को सारा किस्सा मालूम था क्योंकि पीर ने उसके बाद जन्म नहीं लिया था परन्तु मनमोहन सिंह जन्म-मरण में आते-आते अपने अनेक पूर्व-जन्मों को भूल चुका था। अत: पीर ने ही सन्त की संगत में सारा किस्सा सुनाया कि एक हज़ार वर्ष पहले मनमोहन सिंह कौन था और उसने क्या कर्म किया था। इसी प्रकार, प्रजापिता ब्रह्मा, जिसके मानवी तन में परमपिता परमात्मा ने दिव्य प्रवेश किया था, अपने अनेक जन्मों की कहानी को नहीं जानते परन्तु परमपिता परमात्मा शिव, जो ही जन्म-मरण से न्यारे हैं, उसके तन में दिव्य प्रवेश करके अपना भी परिचय देते हैं और प्रजापिता ब्रह्मा के अनेक (चौरासी) जन्मों की कहानी भी सुनाते हैं।

आप विचार कीजिए कि एक हजार वर्ष पहले तो सिक्ख धर्म था ही नहीं। इससे स्पष्ट है कि वर्तमान समय जो आत्मा मनमोहन सिंह के रूप में है, वह १००० वर्ष पहले सनातन धर्म वाली आत्मा थी। इस प्रकार, परमपिता परमात्मा भी आकर समझाते हैं कि जिस साधारण मनुष्य के तन में मैंने प्रवेश किया है वह ५००० वर्ष पहले आदि सनातन देवी-देवता धर्म का था परन्तु अनेक जन्म लेने के बाद आज वह स्वयं को 'हिन्दू' मानता है। अब मैं इसे पुन: पावन बना कर श्री नारायण पद की प्राप्ति के लिए ज्ञान दूँगा।

अब प्रश्न यह है कि जिस व्यक्ति (प्रिंसिपल जी) ने पीर की आत्मा की प्रवेशता का समाचार लिखा है, उन्होंने कैसे समझा कि मनमोहन सिंह के शरीर में पीर की आत्मा का प्रवेश है? पीर ने जो

वाक्य कहे, वह मनमोहन सिंह के नहीं थे, न हो सकते थे, इसलिए मालूम हुआ कि वह किसी दूसरी आत्मा के हैं। पुनश्च, मनमोहन सिंह ने भी अपना अनुभव सुनाया कि पीर की आत्मा की प्रवेशता होने पर उसकी क्या हालत होती थी। अत: परमपिता परमात्मा की प्रवेशता को जानने का भी तो यही तरीका हो सकता है। प्रजापिता ब्रह्मा के तन में परमात्मा शिव जब दिव्य प्रवेश करते हैं, तो जो ज्ञान वह देते हैं और जिन महावाक्यों का उच्चारण वे करते हैं, उनसे ही सिद्ध है कि वह किसी साधारण आत्मा के वाक्य नहीं हैं बल्कि त्रिकालदर्शी, पतित-पावन, कल्याणकारी परमपिता परमात्मा ही के महावाक्य हैं।

परकाय प्रवेश के अन्य समाचार

दूसरे के तन में आत्मा की प्रवेशता के समाचार अन्य समाचार पत्रों में भी यदा-कदा छपते रहते हैं। उदाहरण के तौर पर दैनिक 'नवभारत टाइम्स, नई दिल्ली' के दिनांक १६ जून, १९६८ के रविवारीय परिशिष्ट में प्रकाशित प्रोफेसर बनर्जी द्वारा लिखित यह समाचार पढ़िये –

''जसबीर नाम का एक छोटा-सा बच्चा काफी रात गये रसूलपुर गाँव में मरा था। उसके माँ-बाप ने उसे सुबह होने पर दफनाने का फैसला किया लेकिन तब तक बच्चे में जीवन के लक्षण दिखाई देने लगे। **वह जी तो उठा लेकिन और ही किसी व्यक्ति के रूप में।** उसने कहा कि मैं ब्राह्मण हूँ और इस मुस्लिम परिवार में कुछ नहीं खाऊँगा। लगभग 18 महीने तक लड़के को एक ब्राह्मण औरत के हाथ का

खाना खिलाया गया।

एक दिन बेहेदी के एक स्कूल-अध्यापक पण्डित रविदत्त रसूलपुर आए। जसबीर (के तन में आए ब्राह्मण ने) उन्हें फौरन ही पहचान लिया और शंकरलाल त्यागी के घर की चीज़ों के और बेहेदी गाँव के लोगों के बारे में बातें करने लगा। इससे सभी हैरान हो गए। बाद में जसबीर को (अर्थात् उसके तन में प्रविष्ट ब्राह्मण को) उस गाँव में ले जाया गया, जहाँ उसने बहुत-से लोगों को पहचाना। वहाँ पता चला कि शंकरलाल त्यागी का २३ वर्षीय विवाहित बेटा, जिसके तीन बच्चे थे उसी वक्त मरा था जिस वक्त जसबीर में वह परिवर्तन आया था। जसबीर (के तन में वह ब्राह्मण) आज भी जिन्दा है और रसूलपुर में रहता है लेकिन वह अपने माँ-बाप के पास रहने में खुश नहीं है; वह हर वक्त उसी जीवन की यादों में खोया रहता है, जिसे वह पीछे छोड़ आया है।''

उपर्युक्त समाचार भी परकाय प्रवेश के सिद्धान्त को प्रमाणित करता है। इन समाचारों द्वारा परमपिता परमात्मा के परकाय प्रवेश के जिस सिद्धान्त को प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय लोगों के समक्ष रखता आया है, उसकी पुष्टि होती है। परन्तु आज लोग अज्ञानता की ऐसी प्रगाढ़ निद्रा में सोये हुए हैं कि वे इतनी महत्त्वपूर्ण घोषणा को भी सुनने के लिए तैयार नहीं हैं कि परमपिता परमात्मा शिव ने अब प्रजापिता ब्रह्मा के तन में दिव्य प्रवेश किया है।

पूर्व पृष्ठों में हमने आत्माओं द्वारा परकाय प्रवेश का जो उल्लेख

किया है, उसके सम्बन्ध में हम एक बात और पाठकों के ध्यान में लाना चाहते हैं। वह यह कि आत्माएँ जब परकाय प्रवेश करती हैं तो उस तन द्वारा लौकिक कर्म करती और थोड़ा-बहुत फल भी भोगती हैं, अथवा भोग सकती हैं और वे कर्म-बन्धन से मुक्त आत्माएँ होती हैं। परन्तु परमपिता परमात्मा तो कर्मातीत हैं, अत: वह प्रजापिता ब्रह्मा के तन में प्रवेश करके कोई कर्म-फल नहीं भोगते, न ही वह कोई लौकिक कर्म करते हैं। पुनश्च, वह जब-कभी चाहें, उसको छोड़ कर चले जाते हैं और जब कभी फिर प्रवेश करना चाहें तब फिर प्रवेश कर लेते हैं।

वर्तमान समय परमात्मा का अवतरण हो चुका है

हम पिछले पृष्ठों में परमात्मा के दिव्य नाम, दिव्य रूप, दिव्य धाम तथा अवतरण के रहस्य को स्पष्ट कर आए हैं। ये सभी रहस्य हमने स्वयं अनुभव किए हैं तथा इनका ज्ञान हमें स्वयं भगवान ही ने दिया है। हम यह भी बता आए हैं कि भगवान चूँकि एक दिव्य तथा परम-पवित्र सत्ता हैं, इसलिए उनका ज्ञान तथा अनुभव भी हमें दिव्य बुद्धि तथा दिव्य दृष्टि द्वारा ही हो सकता है। हमारी बुद्धि और दृष्टि तभी दिव्य होती है जब हम ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करें तथा आहार-व्यवहार, दृष्टि-वृत्ति इत्यादि को पवित्र करें तथा ईश्वरीय ज्ञान और दिव्य गुणों को धारण करें। तथापि, किसी नए व्यक्ति के लाभ के लिए हम यहाँ कुछेक अनमोल ज्ञान-बिन्दु (Point) बताते हैं जिनके आधार पर भगवान के अवतरित होने पर उन्हें पहचाना जा सकता है। हमने भी इन ज्ञान-बिन्दुओं के आधार पर ही वर्तमान समय परमात्मा के

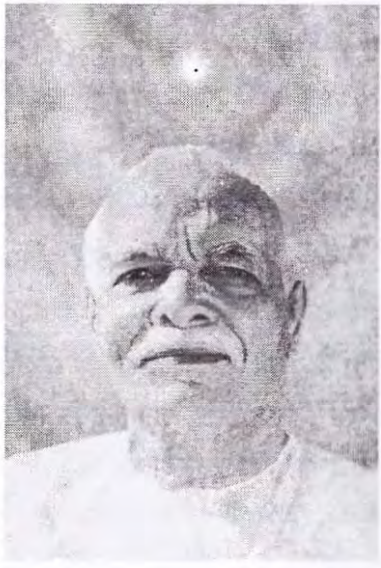

अवतरण को पहचान कर अवर्णनीय लाभ लिया है; अत: हम यहाँ इन्हें लिपिबद्ध कर रहे हैं ताकि अन्य जन भी भगवान के वर्तमान अवतरण के सत्य को पहचानें और उस अपने प्रियतम पिता से सम्पूर्ण सुख-शान्ति का ईश्वरीय जन्म-सिद्ध अधिकार प्राप्त कर लें।

(१) केवल भगवान ही कहते हैं कि "यह मनुष्य-सृष्टि उल्टे वृक्ष के समान है और मैं इसका बीज-रूप हूँ।"

कोई भी मनुष्य स्वयं को सृष्टि रूपी वृक्ष का बीज नहीं कह सकता। यदि कोई भी मनुष्य स्वयं को भगवान का अवतार कहलाएगा तो, देखने के योग्य बात यह है कि वह अपने को इस सृष्टि रूपी वृक्ष का बीजरूप नहीं कह सकेगा क्योंकि बीज में सारे वृक्ष का ज्ञान तिरोहित होता है परन्तु मनुष्यात्माओं को सृष्टि रूपी रचना का ज्ञान स्वत: होता ही नहीं जब तक कि परमात्मा अवतरित होकर न बतायें। बीज तो वृक्ष का 'रचयिता' होता है किन्तु कोई भी मनुष्य स्वयं को सृष्टि का रचयिता नहीं कह सकता, कारण कि वह तो स्वयं ही एक रचना है। अत: केवल गीता के भगवान, जिन्होंने ही इस सृष्टि की तुलना एक 'उल्टे-वृक्ष' से की है, ही ने स्वयं को इस 'वृक्ष' का 'बीज रूप' कहा है और इस 'वृक्ष' का हमें ज्ञान भी दिया है। अन्य किसी भी धर्मस्थापक ने, न यह उपमा दी है और न ही इस वृक्ष का ज्ञान दिया है क्योंकि वे (मनुष्यात्माएँ) तो स्वत: इस सारे 'वृक्ष' को जानते ही नहीं हैं, सर्वज्ञ नहीं हैं। अत: यदि कोई अपने को परमात्मा का अवतार कहता है तो उसे सृष्टि रूपी वृक्ष (रचना) का ज्ञान होना

चाहिए। परन्तु आप देखेंगे कि किसी मनुष्य में यह ज्ञान नहीं होगा। अत: वर्तमान समय हमें फिर से जब यह प्राय: लुप्त ज्ञान मिल रहा है तो मानना होगा कि स्वयं भगवान ही प्रजापिता ब्रह्मा के साधारण मानवी तन में अवतरित हो कर यह ज्ञान दे रहे हैं क्योंकि स्वयं ब्रह्मा को भी यह ज्ञान नहीं था।

(२) भगवान ही आत्माओं के आवागमन को जानते हैं

भगवान, जो कि जन्म-मरण से रहित, 'साक्षी आत्मा हैं', सब धर्मों की आत्माओं के आवागमन को जानते हैं। वह ही बता सकते हैं कि आत्मा ने उनके अवतरण काल तक कितने जन्म लिए। अत: केवल गीता के भगवान ही कहते हैं – ''हे वत्स, मैं तेरे पिछले जन्मों को जानता हूँ; तू नहीं जानता।'' कोई भी मनुष्यात्मा अपने ही पिछले सारे जन्मों को नहीं जानता तो अन्य आत्माओं के जन्मों को जानने की बात ही दूर रही। अत: यदि स्वयं परमात्मा का अवतरण हुआ होगा तो वह मनुष्यात्माओं के पिछले जन्मों को जानता होगा और उसने उनका भेद भी बताया होगा कि उन्होंने सतयुग, त्रेता, द्वापर इत्यादि में से हर-एक युग में कितने जन्म लिए। यदि कोई मनुष्य ही भगवान का अवतार होने का दावा करता होगा तो वह आत्माओं के आवागमन का यह रहस्य नहीं बता सकेगा। परन्तु अब प्रजापिता ब्रह्मा के मुखार्विन्द द्वारा हमें चौरासी जन्मों का ज्ञान मिला है। स्पष्ट है कि स्वयं भगवान ही अवतरित हो कर यह ज्ञान दे रहे हैं।

(३) परमात्मा ही अपने तथा देवताओं के रूप, धाम, कर्त्तव्य इत्यादि का परिचय देता है

कोई भी मनुष्यात्मा – देवताओं (ब्रह्मा, विष्णु, शंकर) का तथा परमात्मा का स्वत: ही परिचय नहीं दे सकती। इनका परिचय तथा रचयिता परमात्मा का ज्ञान तो, परमात्मा स्वयं ही देता है। यही कारण है कि अन्य किसी भी धर्म-स्थापक के शास्त्र में देवताओं का तथा परमात्मा के धाम, रूप इत्यादि का स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलेगा। एक मात्र गीता के भगवान ही हैं जो कहते हैं – ''इस आकाश तत्व के पार जो अन्य अव्यक्त तत्व 'ब्रह्म' (अखण्ड ज्योति महतत्व) है, मैं उस परमधाम में निवास करता हूँ, मैं अव्यक्तमूर्त (ज्योति-बिन्दु) हूँ,'' इत्यादि-इत्यादि। यदि कोई मनुष्यात्मा दम्भ-युक्त हो कर ऐसा कहने का साहस करे तो भी प्रकाश के पार जो अव्यक्त, अविनाशी ज्योति महातत्व है, वह उसका और परमधाम का पूरा परिचय नहीं दे सकेगी और वहाँ परमात्मा का जिस प्रकार निवास है, उसका पूरा चित्र नहीं जान सकेगी। इसी प्रकार, परमात्मा गुरु ही अपने अवतरण द्वारा अपना कर्त्तव्य करता और प्रैक्टिकल में (Practically) उसका परिचय देता है। अन्य कोई भी मनुष्यात्मा नहीं बता सकेगी कि भारतवासियों का वास्तविक और आदि सनातन धर्म क्या है, किसने स्थापन किया और कब। मनुष्यात्मा स्वयं भी उस धर्म में पूर्ण रूपेण स्वत: ही स्थित नहीं हो सकती – अत: उस धर्म की पुन: स्थापना का महती कार्य करने का दम भरना तो उसके बस की बात नहीं। अब हमें ब्रह्मा रूप द्वारा

ब्रह्मलोक इत्यादि का परिचय मिला है। स्पष्ट है कि ब्रह्मलोक के वासी परमात्मा ही ने यह ज्ञान दिया है।

(४) परमात्मा ही माता-पिता, सखा, स्वामी, देव-देव इत्यादि के सम्बन्ध की भासना दे सकता है

"त्वमेव माताश्च पिता त्वमेव...." इत्यादि स्तुति एक माता-पिता, गुरु-स्वामी परमात्मा ही की गायी जाती है। कोई भी मनुष्य इन सभी सम्बन्धों से मिल-जुल नहीं सकता। यह परम-आत्मा का ही कमाल है कि वह साधारण एवं वृद्ध मनुष्य-तन का आधार लेकर भी इन सब सम्बन्धों का अनुभव प्रदान करता है। अत: गीता के भगवान जब अवतरित होते हैं तो उन पर ही यह उक्ति घटती है, उनके ही ये सब सम्बन्ध आत्मा के साथ हैं भी सही। हमने अब माता-पिता इत्यादि सर्व-सम्बन्धों का अनुभव किया है। स्पष्ट है कि ब्रह्मा के तन में सारी सृष्टि के माता-पिता परमात्मा का अवतरण है।

(५) परमात्मा ही कर्म की गहन गति बताता है

कर्मों की गति को, कर्मों का साक्षी रहने वाला ही जान सकता है, अन्य कोई नहीं। कर्मों का फल जानने वाला तो एक परमात्मा ही है। अत: वह गीता का भगवान ही अवतरित होकर कहता है – "हे मनुष्यात्माओ, कर्मों की गति बड़ी गुह्य है। विद्वान्, पण्डित इत्यादि भी इसके विषय में मोहित हैं। मैं तुम्हें कर्म का भी ज्ञान दूँगा। इसलिए मेरे द्वारा सुनो कि कर्म क्या होता है।"

भगवान ही यह सत्य ज्ञान देते हैं कि तीर्थ, जप, दान, पुण्य, यज्ञ, पाठ इत्यादि कर्म-काण्ड से क्या फल मिलता है और कर्मयोग से क्या? लौकिक कर्म या लौकिक विद्या प्राप्ति से क्या लाभ होता है और पारलौकिक विद्या से अथवा ईश्वरीय सेवा में लगने से तथा ईश्वरीय ज्ञान धारण करने से क्या लाभ होता है। अब हमें ब्रह्मा द्वारा कर्मों की गति का पूरा प्रकाश मिला है; यह प्रकाश देने वाला परमात्मा ही है।

(६) परमात्मा ही वास्तविक योग सिखाते हैं

मनुष्यात्मा यह नहीं कह सकती कि – ''पहले भी मैंने योग सिखाया था और अब उस योग का पुन: प्राय: लोप होने के कारण, मैं पुन: उसकी शिक्षा देने के लिए अवतरित हुआ हूँ।'' मनुष्यात्माएँ यह बता ही नहीं सकतीं कि पहले यह योग कब सिखाया था, किस रूप में सिखाया था, क्यों सिखाया था, उस द्वारा क्या सिद्धि हुई थी, वह योग कब और कैसे प्राय:लोप हुआ, यह योग मार्ग है क्या? इत्यादि-इत्यादि। गीता का भगवान ही एकमात्र योगीश्वर (शिव) है जो अवतरित होकर ज्ञान देता और योग सिखाता है। आज संसार में जितने भी योग प्रचलित हैं, उन सबसे न्यारा विवेक-सम्मत और सर्वोत्तम योग अब हमें ब्रह्मा रूप द्वारा सिखाने वाले स्वयं भगवान ही हैं।

(७) परमात्मा ही अपने अवतरण का गुह्य रहस्य खोलते हैं

परमात्मा कहाँ से अवतरित होते हैं, क्यों, कब और किस रूप में अवतरित होते हैं और अवतरण अथवा दिव्य जन्म का वास्तविक

रहस्य क्या है, इसका भेद भी अवतरित होने वाले भगवान स्वयं ही खोल सकते हैं। चुनौती है कि अन्य कोई भी मनुष्यात्मा जो अपने को 'परमात्मा का अवतार' मानती है, अवतरण के विषय में सत्य ज्ञान दे ही नहीं सकती। परन्तु अब परमपिता परमात्मा ही बता रहे हैं कि वे परमधाम से आए हैं और जिन्होंने परकाया प्रवेश किया है।

(८) "आत्माएँ कब और कहाँ से आती हैं और कब लौटती हैं"– यह परमात्मा ही बताते हैं

कोई भी लौकिक गुरु, विद्वान अथवा स्वयं को परमात्मा का अवतार कहने वाला कोई व्यक्ति कभी नहीं बता सकता कि मनुष्यात्माएँ इस सृष्टि-मंच पर कहाँ से और कब आने लगती हैं, मनुष्यात्माओं का रूप क्या है, वे किस-किस धर्म-वंश में आकर जन्म लेती हैं, यह मनुष्य-सृष्टि कैसे वृद्धि को प्राप्त होती है और फिर आत्माएँ कब और कैसे अपने धाम को वापिस लौटती हैं। एक मात्र गीता का भगवान ही बताता है कि ब्रह्मा का दिन होने पर आत्माएँ इस सृष्टि-मंच पर आने लगती हैं और ब्रह्मा की रात्रि का अन्त होने पर वापिस लौट जाती हैं। "ब्रह्मा का स्वरूप क्या है, उसके दिन और रात्रि से क्या अभिप्राय है", मनुष्यात्माएँ तो इसका भी विवेकयुक्त स्पष्टीकरण नहीं दे सकतीं। परमात्मा, जो ही ब्रह्माण्ड का मालिक है और इस सृष्टि का रचयिता है, इस भेद को खोल सकता है। अत: अब जबकि हमें यह ज्ञान मिला है, तो हम क्यों न मानें कि स्वयं भगवान ही ब्रह्मा रूप द्वारा यह ज्ञान दे रहे हैं।

(९) विनाश का ज्ञान और साक्षात्कार

क्योंकि अधर्मों तथा आसुरी सम्प्रदायों का विनाश परम-आत्मा ही शंकर द्वारा कराते हैं, अत: विनाश कब, किसका, क्यों और कैसे होता है, उसका ज्ञान और साक्षात्कार भी स्वयं परमात्मा ही अवतरित होकर कराते हैं, मनुष्यात्माएँ न विश्वास कराने के निमित्त हैं, न ही वे उसका साक्षात्कार करा सकतीं और ज्ञान दे सकती हैं। अत: कोई भी मनुष्यात्मा जो अपने को 'परमात्मा का अवतार' मानती हैं, विनाश का पूर्ण परिचय दे नहीं सकतीं। गीता के भगवान ही एकमात्र ऐसी आत्मा हैं जो कहते हैं कि – ''मैं महाकाल हूँ, सारी सृष्टि का विनाश ही मेरा अभिप्राय है। हे वत्स, देख, विनाश के कारण कैसे मनुष्यात्माएँ पतंगों के सदृश्य मेरे परमधाम को लौट रहीं हैं। हे वत्स, वह समस्त आसुरी सम्प्रदाय जो तमोगुण और विकारों के प्रभाव में है और जो लोग अपने को भगवान अथवा शिव कहते हैं या ईश्वर को नहीं मानते, विनष्ट हुए ही पड़े हैं।'' अत: अब जबकि इसका विस्तृत ज्ञान मिला है और साक्षात्कार भी कराया गया है तो क्या यह मानना सही नहीं होगा कि यह महाकालेश्वर भगवान ही करा रहे हैं।

(१०) परमात्मा युगल रूप रचता है

परमात्मा शिव युगल रूप द्वारा धर्म-स्थापना का कार्य करते हैं। आप देखेंगे कि अन्य जो मनुष्य अपने-अपने धर्म की स्थापना के निमित्त बने, युगल नहीं थे। परमात्मा ही हैं जो कि ब्रह्मा और सरस्वती (आदिनाथ-आदि देवी, एडम-ईव अथवा आदम-हव्वा) का रूप रच

कर युगल रूप से सतयुगी सृष्टि अथवा धर्म की पुन: स्थापना करता है। यह बात अलग है कि लोगों ने युगल श्रीकृष्ण और श्रीराधे को ही गीता-ज्ञान का निमित्त मान लिया है जबकि वास्तव में परमात्मा ब्रह्मा-सरस्वती (जो ही अगले जन्म में क्रमश: श्रीकृष्ण और श्रीराधे बनते हैं) का युगल रूप रचते हैं। यह कर्त्तव्य अब हमारी आँखों के सामने युगल रूप द्वारा हुआ है।

(११) परमात्मा धर्म-स्थापना का कार्य माताओं द्वारा कराते हैं

यह भी प्रसिद्ध है कि गीता के भगवान ने अनेक माताओं व कन्याओं को जरासंध इत्यादि की जेलों से मुक्त कराके अतीन्द्रिय सुख प्रदान किया। यही भारत-माताएँ, शक्तियाँ अथवा गोपियाँ ही प्रमुख रूप से भगवान द्वारा धर्म-स्थापना के कार्य में योगदान देती हैं। अत: पहचान की यह भी एक युक्ति है कि गीता के भगवान धर्म-ग्लानि के समय अवतरित होकर माताओं-कन्याओं द्वारा ही धर्म-स्थापना का कार्य कराके, माता-गुरु की प्रथा चलाते हैं। लौकिक मनुष्यात्माएँ अथवा धर्म-स्थापक तो स्त्रियों को 'माया का रूप' मानते, उनको छोड़ कर जंगल में भाग जाते व पति को ही स्त्रियों का गुरु बताते हैं। परमात्मा ही हैं जो कि माताओं-कन्याओं को सहज ज्ञान दे कर उनके जीवन को ऊँचा उठाते हैं। यह आँखों देखी बात भी वर्तमान समय ही पुनरावृत्त हो रही है जो कि हर कोई देख व जान सकता है।

(१२) परमात्मा का अवतरण प्रवृत्ति मार्ग के एक साधारण एवं वृद्ध मनुष्य के तन में होता है

गीता के भगवान किसी संन्यासी, उदासी, विद्वान इत्यादि की देह में अवतरित नहीं होते, तभी तो वह दैवी प्रकृति मार्ग का उपदेश करते हैं। वह तो प्रवृत्ति मार्ग के एक साधारण एवं वृद्ध मनुष्य के शरीर का आधार लेते हैं, जिसे (प्रवेश के पश्चात्) 'ब्रह्मा' कहते हैं और जिसका कि अनेक जन्मों के अन्त के जन्म का भी अन्तिम चरण होता है। अन्य कोई मनुष्यात्मा ऐसा करने का दावा कर ही नहीं सकती – ऐसी है युक्ति इस विराट सृष्टि नाटक की। यह ईश्वरीय कृत्य भी अब हुआ है।

(१३) परमात्मा ही 'मन्मनाभव' रूपी उपदेश देते हैं

किसी मनुष्यात्मा की यह सामर्थ्य ही नहीं कि वह कहे कि – ''मैं तुम्हें परमधाम ले चलूँगा। हे वत्स, तू मेरी शरण ले, मैं तुम्हें सब पापों से मुक्त कर दूँगा।'' पाप-नाशक शक्ति एक ही सर्वशक्तिवान ''भगवान में है।'' ''भगवान की शरण लेने का क्या अर्थ है? उससे पाप कैसे समाप्त होते हैं, शरण लेने की क्या आवश्यकता है? यह सभी रहस्य भी परमपिता ही खोलते हैं।'' ''मन्मनाभव'' रूप आदेश-उपदेश परमात्मा के सिवाय अन्य कोई नहीं दे सकता। यदि कोई मनुष्य-आत्मा, जो स्वयं को परमात्मा का अवतार बतातीं हैं, करे भी तो वह 'मन्मनाभव' का न सत्य अर्थ बता सकती हैं और न ही उसकी याद में रहने से पवित्रता-सुख-शान्ति की पूर्ण प्राप्ति हो सकती है –

यह निश्चित बात है।

अत: अब जबकि हमें यह अर्थ समझाया गया है और यह प्राप्ति हो रही है तो स्वभावत: यह कथन सत्य ही है कि प्रजापिता ब्रह्मा को और उन द्वारा हम सभी को वर्तमान समय स्वयं परमात्मा ही अवतरित हो कर यह स्पष्ट, सरल, उत्तम ज्ञान दे रहे हैं और हमारे जीवन को उच्च एवं सुख-शान्ति सम्पन्न बना रहे हैं।

सभी मनुष्यात्माओं को ईश्वरीय निमन्त्रण

अत: हम संसार की सभी मनुष्यात्माओं को, उन के शुभ-चिन्तक होकर, ईश्वरीय निमन्त्रण देते हैं कि वे हमारे किसी भी ज्ञान एवं योग-केन्द्र पर एक सप्ताह नित्य प्रति एक घण्टा पधार कर, इस सत्यता को समझें और पहचानें कि प्रियतम परमपिता परमात्मा वर्तमान समय अवतरित हो कर हम मनुष्यात्माओं को कैसे आशातीत पवित्रता, शान्ति, दिव्यता एवं सुख के वरदान तथा ज्ञान और योग के वरदान दे रहे हैं। हमारी यह सेवा नि:शुल्क है।

याद रहे कि इस कलियुगी, आसुरी सृष्टि के महाविनाश का समय अति निकट है। परमात्मा द्वारा सतयुगी पावन सृष्टि की पुन: स्थापना का कार्य प्राय: समाप्त होने पर है। अत: देर करना अच्छा नहीं है।

अभी नहीं तो कभी नहीं!

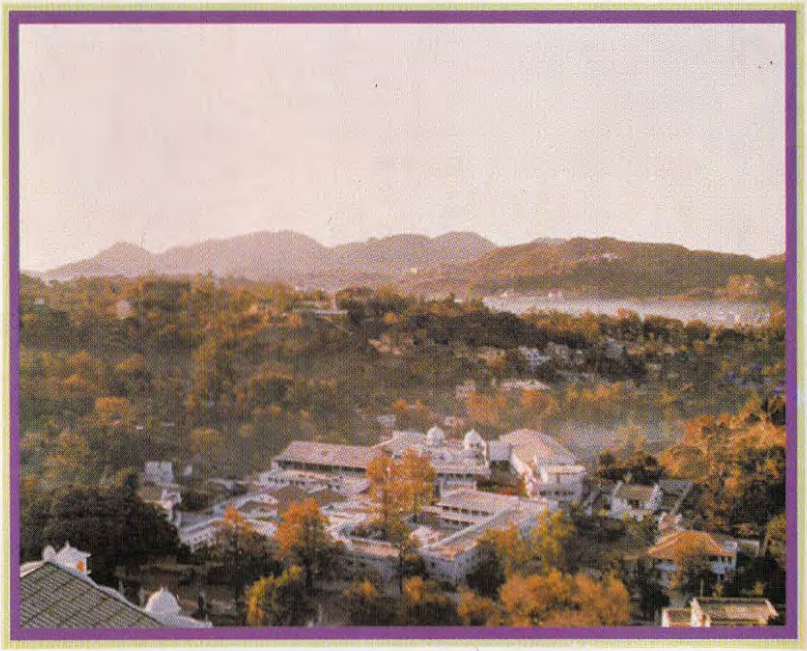

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय

अन्तर्राष्ट्रीय मुख्यालय : आबू पर्वत (राजस्थान)